होती है। ज्यादातर जुर्म धन के लिये ही किए जाते हैं। पर तो भी जो लोग इन जुर्मों को करते हैं और उनके लिये सजा भोगते हैं, उनके पास कभी ज्यादा धन देखने में नहीं आता। इसके विपरीत जो लोग बड़े-बड़े महलों में रहते हैं और किसी प्रकार का 'क़ानूनी जुर्म' नहीं करते, उनके पास इतनी सम्पत्ति रहती है कि वे यह भी नहीं समझ सकते कि उसका क्या करें। इसलिये सच्ची बात यह है कि जिन उपायों से ये बड़े लोग रुपया कमाते हैं, उनको उन्होंने क़ानून के मुताबिक ठहरा दिया है और जिन उपायों से तुम जेल में रहने वाले ग़रीब लोग रुपया कमाते हो उनको क़ानून के खिलाफ़!

मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि मुझे दुनिया की किसी जेल में से पाँच सौ बुरे से बुरे मुजरिम और किसी बड़े शहर की गन्दी गलियों में से निर्लज्ज से निर्लज्ज पाँच सौ वेश्याएँ छाँट कर दे दो। और एक ऐसी जगह दे दो, जहाँ पर उन सबको रहने तथा खेती-बाड़ी के लिए काफ़ी ज़मीन हो। थोड़े ही समय बाद आप देखेंगे कि वे ही निकृष्टतम समझे जानेवाले लोग, उसी तरह के सभ्य और सज्जन बन जायँगे, जैसे कि दुनिया के साधारण लोग होते हैं।

इन सब बुराइयों के सुधार का केवल एक उपाय है। है। पर या तो संसार ने उसे कभी जाना ही नहीं, और यदि जाना भी तो उस पर अमल करने की कोशिश नहीं

अन्तर्राष्ट्रीय साहित्यमाला—प्रथम पुष्प

साम्यवाद का संदेश

(The Message of Socialism)

लेखक—

श्री सत्यभक्त

(लेनिन, मार्क्स, महायुद्ध, आयर्लैंड के गदर की कहानियाँ, इत्यादि सुप्रसिद्ध, राजनैतिक ग्रंथों के रचयिता)

प्रकाशक—

अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य कार्यालय,

इलाहाबाद

अजिल्द ।) | सन् १९३४ | सजिल्द ॥)

प्रकाशक
घनवारीलाल
अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य कार्यालय
इलाहाबाद

मुद्रक—
बजरंगबली 'विशारद'
श्रीसीताराम प्रेस, जालिपादेवी, काशी।

प्रेमोपहार

श्री ____________________

____

____

भूमिका

कुछ वर्षों से हमारे देश में जागृति की एक नई लहर उत्पन्न हुई है। देश और समाज की अवस्था का निरीक्षण करनेवाले व्यक्ति समझने लगे हैं कि हमलोगों की सामाजिक स्थिति कालचक्र के प्रभाव से असामयिक, जराजीर्ण और दोषपूर्ण हो गई है और इसीलिये तरह-तरह के कष्ट सहन करने तथा सुधार के लिये इतनी हाय-हाय करने पर भी कोई वास्तविक परिणाम दिखलाई नहीं पड़ता। यद्यपि लोग समझ गये हैं कि जात-पाँत का भेद निस्सार है, विवाह सम्बन्धी अनगिनती बन्धन कृत्रिम

हैं, अनिवार्य वैधव्य-प्रथा घोर निष्ठुरता की परिचायक है, छुआछूत मूर्खतापूर्ण है, पर तो भी इन तमाम दोषों में कमी होती नजर नहीं आती। देश की अधिकांश जन संख्या अब भी पुरानी हानिकारक रूढ़ियों पर चलना ही प्रशंसनीय समझती है। ऐसी परिवर्तन विरोधी मनोवृत्ति के कारण देश की आर्थिक और राजनीतिक उन्नति के मार्ग में भी रोड़ा अटका हुआ है। और इसी कारण कांग्रेस के प्रबल सत्याग्रह आन्दोलन का भी परिणाम अधिकांश में निराशाजनक देखने में आता है। लोग जोश और बढ़ावे में आकर खड़े तो हो जाते हैं, पर उनके पैरों में पड़ी प्राचीन रूढ़ियों तथा विचारों की बेड़ियाँ उनको फिर शीघ्र ही बैठने को विवश करती हैं।

इस दशा को देखकर अब कितने ही विचारशील व्यक्तियों का ध्यान सुधार के लिये अब तक किये जाने-वाले उपायों से हटकर दूसरी तरफ जाने लगा है। उनको अनुभव हुआ है कि जब तक हमारे समाज की दशा का जड़मूल से संशोधन न किया जायगा, जब तक इसमें सर्वत्र फैली हुई हानिकारक विषमता तथा छोटे-बड़े के हद दर्जे तक बढ़े हुये भेद को न मिटाया जायगा, तब तक कोई आन्दोलन वास्तविक सफलता प्राप्त न कर सकेगा। क्योंकि ऐसे विषमतापूर्ण समाज में एकता स्थापित हो

सकना असम्भव है और विना एकता के विरोधी शक्तियों का मुक़ाबिला कर सकना कठिन है।

यही विचार-धारा उस साम्यवादी आन्दोलन को उत्तेजना देनेवाली है जिसकी चर्चा हम पिछले कई महीनों से पढ़ते और सुनते चले आते हैं और जिसने देश के राजनीतिक वातावरण में एक अपूर्व हलचल उत्पन्न कर दी है। अब नवयुवकों का विशेष रूप से यह मत होता जाता है कि पुराने तरीके वेकार हैं और जब तक हम समस्त जनता के उत्थान तथा कष्टमोचन को ही अपना प्रधान तथा प्रत्यक्ष कार्यक्रम न बनायेंगे तब तक सच्ची उन्नति हमसे कोसों दूर रहेगी। जब तक साधारण जनता हृदय से यह अनुभव न करेगी कि आन्दोलन हमारे ही लिये किया जा रहा है और उससे जो लाभ होगा वह हमीं को प्राप्त होगा तब तक वह सच्चे मन से उद्योग नहीं कर सकती। जनता के हृदय में ऐसा भाव उत्पन्न करने का एकमात्र आन्दोलन अथवा कार्यक्रम साम्यवाद का ही है।

ऐसे अवसर पर साम्यवादी साहित्य का प्रचार स्वाभाविक और आवश्यकीय ही है। अभी तक देशी भाषाओं में इस विषय का साहित्य नाममात्र को हैं और वह जनता के हाथों में बहुत कम पहुँचा है। इसलिये हमारे यहाँ अधिकांश लोग साम्यवाद से अनजान हैं और कुछ

भ्रान्तिपूर्ण मतों को सच समझे हुए हैं। कितने ही लोग स्वार्थवश साम्यवाद के विषय में असत्य प्रचार भी करते देखे जाते हैं। ऐसी परिस्थिति में यह छोटी सी पुस्तक पाठकों को अवश्य ही उपयोगी प्रतीत होगी। इससे साम्यवाद के सिद्धान्तों का मोटे तौर पर ज्ञान हो सकेगा और उससे प्राप्त हो सकनेवाले अनेक लोगों का भी पता चलेगा। इसमें जितने लेख दिये गये हैं वे विभिन्न समयों पर स्वतंत्र लेखों के रूप में प्रकाशित हो चुके हैं उनमें से अधिकांश महान साम्यवादी लेखकों की रचनाओं के आधार पर हैं और इस दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। 'नवयुवकों से अपील' रूस के प्रसिद्ध विद्वान् प्रिन्स क्रोपाटकिन की अत्यन्त भावपूर्ण रचना है। 'अपराधी कौन है' अमरीका के साम्यवादी वकील क्लेरेंस डैरो के भाषण के आधार पर लिखा गया सर्वथा मौलिक विचारों से भरा लेख है। 'तालाव की कहानी' वर्तमान आर्थिक अव्यवस्था को समझानेवाला एक अनोखा रूपक है। हमको पूर्ण आशा है कि ये तमाम लेख पाठकों को रुचिकर होने के साथ ही वर्तमान सामाजिक तथा आर्थिक प्रश्नों पर एक नवीन प्रकाश डालनेवाले सिद्ध होंगे।

प्रयाग
१८-१०-३४

सत्यभक्त

विषय-सूची

काटनेवाले हैं—इस जमाने में जितने आविष्कार होते हैं उनसे धनवान लोग ही लाभ उठा सकते हैं—वर्तमान परि-स्थिति में शिक्षक अपना कर्तव्य-पालन नहीं कर सकते—स्कूलों में वही बातें पढ़ाई जा सकती हैं जो पूँजीपतियों और शासकों के अनुकूल हों—आजकल कला का एक मात्र उद्देश्य श्रीमानों का मनोरंजन करना रह गया है—इस परिस्थिति में प्रत्येक व्यक्ति के लिये दोही मार्ग हैं—या तो साधारण जनता की दुर्दशा की तरफ़ से आँखें बन्द करके अपने लिये ऐश-आराम के साधन जुटाने की चेष्टा करे अथवा अपने स्वार्थ को भूलकर ग़रीबों के उद्धार में लग जाय—इस मार्ग में बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ हैं—महत्वाकांक्षी लोगों से ग़रीबों की भलाई नहीं हो सकती—कष्ट-ग्रसित साधारण जनता की सेवा ही सर्वोत्कृष्ट आदर्श है—इस आदर्श को सिद्ध करने का मार्ग साम्यवाद ही है—ग़रीबों और साधारण श्रेणी-वालों के लिये साम्यवादी होना अनिवार्य है जब तक वर्तमान सामाजिक-प्रणाली क़ायम रहेगी, तब तक किसी स्त्री-पुरुष को सच्चा सुख नहीं मिल सकता—जनता की सम्मिलित शक्ति ही इस प्रणाली का अन्त कर सकती है।

जुर्म की सत्ता—क्या सज्जन होने से मनुष्य धनवान हो सकता है—संयोग या भाग्य की दुहाई निरर्थक है—

साम्यवाद का सन्देश



साम्यवाद का संक्षिप्त परिचय

साम्यवाद एक सामाजिक और आर्थिक सिद्धान्त है, जिसका आधार ऐतिहासिक क्रम-विकास है। यह एक विज्ञान है, जिसका सम्बन्ध मनुष्य-जीवन से है। इसका उद्देश्य है मनुष्य-समाज की शीघ्रतापूर्वक उन्नति करना और दुनिया को वर्तमान समय की अपेक्षा अधिक सुखकर बनाना। कुछ स्वार्थी या बेसमझ लोग बतलाते हैं कि साम्यवाद का अर्थ लूट-मार, उपद्रव और मनुष्य के सद्‌गुणों का नाश है। यह बात बिलकुल ग़लत है। साम्यवाद में कोई ऐसी बात नहीं जिससे मनुष्य-समाज को किसी प्रकार का भय या उसकी हानि हो।

साम्यवाद का उद्देश्य यह है कि उन तमाम चीज़ों पर, जो कि सर्व-साधारण के जीवन के लिए आवश्यक हैं, समाज का अधिकार रहे। इसका अर्थ यह नहीं कि हमारे व्यक्तिगत इस्तेमाल की चीज़ों पर भी समाज का अधिकार रहेगा। साम्यवाद यह कभी नहीं कहता कि मेरे कपड़ों, घड़ी, चश्मा, मेज़, कुरसी, भोजन के बर्तन आदि पर भी समाज का या पञ्चायत का अधिकार हो जायगा। क्योंकि इन चीज़ों का इस्तेमाल मैं व्यक्तिगत रूप से करता हूँ; और इन पर मेरा अधिकार रहने से दूसरे किसी पुरुष या स्त्री को तकलीफ़ नहीं होती। पर अगर मैं किसी ज़मीन के हिस्से को या खान, रेलवे, कारख़ाने आदि को अपनी सम्पत्ति बतलाऊँ, उन पर अधिकार क़ायम करूँ तो साम्यवाद उसका विरोध करता है। क्योंकि इन चीज़ों का इस्तेमाल मैं व्यक्तिगत रूप से नहीं कर सकता—सिर्फ़ अपने शरीर द्वारा मेहनत करके मैं ज़मीन, खान, रेल या कारख़ाने से कोई कार्य सिद्ध नहीं कर सकता। बिना दूसरे बहुत से लोगों की सहायता के न ज़मीन न रेल चलाई जा सकती है, न खान और कारख़ाने में माल तैयार किया जा सकता है। ये सब कारबार, व्यापार, खेती आदि आजकल के ज़माने में सब लोगों के सहयोग से ही चल सकते हैं, और सबको अपनी जीवन-रक्षा के लिए उनकी आवश्यकता है। इसलिए साम्यवाद उन पर किसी

खास आदमी का अधिकार रहना मंजूर नहीं करता।

आजकल लाखों आदमी जो कारखानों, खानों, खेतों वग़ैरः में काम कर सकते हैं, इन चीज़ों के मालिकों की इच्छा न होने से वेकार फिरते हैं। एक होशियार कपड़े बुननेवाला उस समय तक कपड़ा तैयार नहीं कर सकता जब तक कि कारख़ाने का मालिक उसे नौकर न रक्खे। चाहे उसी कपड़े के अभाव से उस बुननेवाले के स्त्री और बच्चे ठण्ड से मरते हों; और चाहे उसके दूसरे भाई को किसी सहायक के अभाव से अपनी ताक़त से वाहर काम करना पड़ता हो, पर उसे किसी कारखाने के मालिक की मर्जी न होने के कारण लाचार होकर वेकार वैठे रहना पड़ता है।

साम्यवाद कहता है कि ज़मीन, रेल, खानों, कारख़ानों पर तमाम समाज या देश का अधिकार रहना चाहिए। उनका इन्तजाम किसी एक आदमी के नफ़े की निगाह से न होना चाहिए, वरन् सव लोगों के फ़ायदे के वास्ते किया जाना चाहिए। साम्यवाद कहता है कि जव पैदावार और बँटवारे के साधनों पर सर्व-साधारण का अधिकार रहेगा तो सव लोगों को काम करने का मौक़ा मिलेगा, पर किसी को शक्ति से वाहर काम न करना पड़ेगा। सव लोगों को कुछ-न-कुछ समाज के लिए उपयोगी परिश्रम करना पड़ेगा और कोई आदमी जीवन-निर्वाह की आवश्यक वस्तुओं से वञ्चित न

रहेगा। साम्यवाद कहता है कि सर्व-साधारण के काम में आनेवाली तमाम चीजों पर समाज का या पञ्चायती अधिकार हो जाने से दरिद्रता दूर हो जायगी, बहुत से ऐसे दोष मिट जायँगे जो दरिद्रता के कारण पैदा होते हैं, अज्ञान और संयमहीनता जाती रहेगी, और बहुत सी सामाजिक बुराइयों और अपराधों का नाम भी नहीं रहेगा।

कुछ लोग कहते हैं कि साम्यवाद असम्भव है, क्योंकि संसार जैसा आजकल है, सदा से ऐसा ही चला आया है और सदा ऐसा ही रहेगा। पर यह कथन बिल्कुल ग़लत है। न तो संसार की वर्तमान दशा पहले ज़माने के समान है और न आगे चलकर वह आजजल के समान क़ायम रहेगी। जीवन का लक्षण ही परिवर्तन होना है, और परिवर्तन के बिना जीवन सारहीन है। लाखों करोड़ों वर्ष पहले एक ऐसा ज़माना था, जब कि लोग जङ्गलों में नङ्गे फिरते थे, उस दशा से बदल कर अब लोग सभ्य बनकर बड़े-बड़े शहरों में रहने लगे हैं और उनके बड़े बड़े राष्ट्र बन गए हैं। सभ्यता का स्रोत यहाँ भी नहीं रुक सकता और मनुष्य-जाति में बराबर परिवर्तन होता जायगा। वह उन्नति करती जायगी और ऊँची चढ़ती जायगी। जिस प्रकार पुराने ज़माने के राजाओं और सरदारों की हुकूमत बदलकर आजकल सेठ-साहूकारों की हुकूमत क़ायम हो गई है, इसी प्रकार आनेवाले ज़माने में

सेठ-साहूकारों की हुकूमत के स्थान में कारीगर और मज़-दूरों की अर्थात् साम्यवाद की हुकूमत क़ायम होगी।

जब मनुष्य-समाज साम्यवाद के सिद्धान्त के अनुसार संगठित हो जायगा तब श्रम (सब प्रकार की मेहनत-मजूरी) ही सबसे अधिक महत्व और सम्मान की चीज़ मानी जायगी। यह संसार के इतिहास में एक बिल्कुल नई बात होगी। प्राचीन काल के समाज का सङ्गठन शारीरिक शक्ति के आधार पर किया गया था। उस समय युद्ध में लड़नेवाले क्षत्री और बहादुर राजा लोग ही समाज में सबसे बड़े माने जाते थे। उस समय का राज्य (शासन-सत्ता) भी सैनिक सङ्गठन का एक अंग था। वर्तमान समाज का सङ्गठन धन के आधार है। बड़े-बड़े सेठ-साहूकार और कारखाने के मालिक आजकल समाज के मुखिया माने जाते हैं। आज-कल के राज्य या शासन-सत्ता का एकमात्र लक्ष्य जायदाद की रक्षा करना है। भविष्य काल के समाज की रचना मानवीय श्रम के सुदृढ़ और विस्तृत आधार पर की जायगी। श्रमजीवी या मज़दूर ही उस समाज में सबसे प्रधान समझे जायँगे उस समय की सरकार या शासन-सत्ता का उद्देश्य मनुष्यों के जीवन की रक्षा और उनके सुख की वृद्धि करना होगा।

आज़कल हम जब श्रमजीवी या मज़दूर का शब्द उच्चा-

रण करते हैं तो हमारा मतलब स्पष्ट रीति से समाज की एक ख़ास श्रेणी से होता है। पुराने ज़माने की सैनिकता-प्रधान समाजों में मज़दूर (जिसके लिए प्राचीन भारतीय साहित्य में 'शूद्र' का शब्द प्रयोग किया गया है) सबसे नीची श्रेणी या जाति समझी जाती थी। क्षत्री या सिपाही श्रमजीवियों को अपनी अपेक्षा बहुत ही तुच्छ समझते थे। जो किसान ज़मीन को जोत-बोकर अन्न पैदा करता था, जिसे खाकर लड़नेवाले योद्धा और सरदार मूँछों पर ताव देते थे, उस किसान को सबसे नीचे दर्जे का समझा जाता था मिश्र, यूनान, रोम, चीन आदि प्राचीन साम्राज्यों में मज़दूरों को केवल नीचे दर्जे का प्राणी ही नहीं समझा जाता था, वरन् उनको निरा गुलाम ही माना जाता था। सब चीज़ बनाने और पैदा करने का काम गुलामों और औरतों को करना पड़ता था। औरतों और मज़दूरों की संसार में सब जगह सदा से इसी प्रकार दुर्दशा होती आई है। ये लोग, जो कि संसार की आवश्यकताओं को पूरा करते थे और जिनके परिश्रम पर मनुष्य-जाति की उन्नति का आधार रहा है, समाज में सबसे बढ़कर अत्याचारों के शिकार और पराधीन होकर रहे हैं। अब समय ने पलटा खाया है और श्रमजीवी तथा स्त्रियाँ अपने ऊपर होनेवाले अत्याचारों को समझने लगे हैं और समान अधिकार तथा न्यायानुकूल व्यवहार के लिए आवाज़

बुलन्द करने लगे हैं।

श्रमजीवियों की इस जागृत का कारण था मैशीन, कारखाने, इञ्जिन, बिजली आदि का आविष्कार और इनके द्वारा बड़ी तादाद में माल तैयार करने का नया तरीका। इस व्यापारिक और आर्थिक क्रान्ति ने श्रमजीवियों और स्त्रियों में एक नई शक्ति पैदा कर दी, समाज में उनका महत्व बढ़ा दिया और उनकी स्वाधीनता का मार्ग खोल दिया। आजकल के धनसत्तावादी (वनियाशाही) समाज में श्रमजीवियों पर उस प्रकार के खुल्लमखुल्ला अत्याचार नहीं किये जाते, जैसे पुराने ज़माने के राजाओं और नवाबों के समय में हुआ करते थे। पर अब भी श्रमजीवयों को पूँजीपतियों या धनिकों का दास बनकर ही रहना पड़ता है और सामाजिक दृष्टि से भी उनको धनवानों की अपेक्षा नीच समझा जाता है। आजकल के ज़माने में एक छोटा पूँजीपति भी जो कि व्याज भाड़े से रुपया कमाता है, अपने को उस आदमी से श्रेष्ठ समझता है, जो कि मज़दूरी या नौकरी का पेशा करता है। ये पूँजीपति अपनी ज़मीन जायदाद के प्रभाव से विद्या, शिक्षा, संस्कृति, आदि में भी दूसरे लोगों से आगे बढ़े होते हैं, उनको उन्नति के सब साधन प्राप्त होते हैं; उनको तरक्क़ी करने का मौका दूसरे लोगों की अपेक्षा बहुत ज्यादा मिलता है; और जीवन की सब उत्तम वस्तुएँ

उन्हीं के हिस्से में आती हैं, श्रमजीवी आजकल के ज़माने में यद्यपि ग़ुलाम या दास नहीं माने जाते, तो भी मनुष्य-समाज में अभी तक उनके साथ एक ग़ैर आदमी के समान बर्ताव किया जाता है। आजकल श्रमजीवी या मज़दूर के शब्द से एक नीच श्रेणी या जाति का बोध होता है, पर भविष्य के साम्यवादी समाज में श्रमजीवी या मज़दूर का शब्द ही नहीं रहेगा, क्योंकि उस समय इस शब्द से समाज के किसी खास श्रेणी का बोध नहीं होगा। उस समय तमाम स्त्री-पुरुष श्रमजीवी होंगे। उस समय बीमारों, कमजोरों, बच्चों और बुड्ढों के सिवा संसार के तमाम मनुष्य मेहनत करके जीवन की जरूरी चीजें पैदा करेंगे।

नवयुवकों से दो बातें



[यह लेख योरोप के प्रसिद्ध विद्वान् और साम्यवाद के प्रचारक प्रिन्स क्रोपाटकिन का लिखा है। यह लेख नवयुवकों को जीवन का सच्चा मार्ग दिखलाता है और उनके सामने एक ऐसा आदर्श उपस्थित करता है जिसपर अमल करने से मनुष्य-जीवन सार्थक हो सकता है]

आज मैं युवकों से कुछ बातें कहना चाहता हूँ। बूढ़े लोगों को—दर असल मेरा मतलब है दिल और दिमाग़ के बूढ़ों से—इस लेख के पढ़ने की तकलीफ़ न उठानी चाहिये, क्योंकि इसके पढ़ने से सिर्फ़ उनकी आँखें थकेंगी और फ़ायदा कुछ भी न होगा।

मैं कल्पना करता हूँ कि तुम्हारी उम्र अठारह-बीस वर्ष की है, तुम अपने शिक्षाकाल या विद्यार्थी-जीवन को समाप्त कर चुके हो और अब सांसारिक जीवन में प्रवेश कर रहे हो। मैं यह भी माने लेता हूँ कि जिस अन्धविश्वास को तुम्हारे शिक्षकों ने तुम्हारे भीतर भरने की कोशिश की थी उसका तुम्हारे दिमाग़ पर कुछ भी असर नहीं पड़ा है। तुम नर्क-स्वर्ग की बातों से नहीं डरते; और तुम मुल्लाओं तथा पुजारियों के थोथे उपदेशों को सुनने नहीं जाते। साथ ही तुम उन दिखावटी लोगों में से भी नहीं हो, जो गिरी हुई जातियों में प्रायः पैदा हुआ करते हैं। ऐसे लोग अपने चमकीले-भड़कीले कपड़ों और बन्दर की-सी शकल को मेले तमाशों में दिखलाया करते हैं, और छोटी उमर से ही किसी भी तरह सुख भोगने की बेहद लालसा रखते हैं। बल्कि मैं तो यह मानता हूँ कि तुम एक सहृदय व्यक्ति हो, और इसी कारण मैं तुमसे बातें करता हूँ।

मैं जानता हूँ कि तुम्हारे मन में प्रायः एक सवाल उठा करता है कि "हमें आगे चलकर क्या करना है ?" सचमुच कोई भी मनुष्य अपनी युवावस्था में यही समझता है कि उसने बहुत समय तक समाज की सहायता द्वारा जिस विद्या या कला का अध्ययन किया है। उसका उद्देश्य यह नहीं है कि अपने ज्ञान को दूसरे लोगों को लूटने तथा स्वार्थ-

साधन का ज़रिया बनाया जाय। ऐसा व्यक्ति तो अवश्य ही महाभ्रष्ट है और दुर्गुणों से भरा है, जो यह कल्पना नहीं करता कि समय आने पर वह अपनी बुद्धिमत्ता, अपनी योग्यता और अपने ज्ञान को उन लोगों के अधिकार दिलाने में लगावेगा, जो कि आज दुर्दशा और अज्ञान में फँसे पड़े हैं।

मैं माने लेता हूँ कि तुम उन्हीं में से एक हो जिनको इस प्रकार के स्वप्न आया करते हैं! क्या वास्तव में ऐसा नहीं है? अच्छा, तो अब हमको देखना चाहिये कि अपने स्वप्न को सत्य बनाने के लिये तुमको क्या करना आवश्यक है।

मैं यह नहीं जानता कि तुम कैसे घर में पैदा हुए हो। सम्भव है, तुम किसी सम्पत्तिशाली घर के हो और तुमने विज्ञान के अध्ययन का विचार किया हो; तुम डाक्टर बनना चाहते हो, अथवा वैरिस्टर, या लेखक, या वैज्ञानिक। तुम्हारे सामने एक विशाल कार्यक्षेत्र मौजूद है, और तुम विस्तीर्ण ज्ञान और सुशिक्षित बुद्धि को लेकर कार्यक्षेत्र में प्रवेश कर रहे हो। अथवा इसके विपरीत तुम एक मेहनती कारीगर हो और तुमने स्कूल में विज्ञान की साधारण शिक्षा ही प्राप्त की है। साथ ही तुमको इस बात का स्वयं अनुभव प्राप्त करने का मौक़ा मिला है कि वर्तमान समय में श्रम-

जीवियों अथवा मजदूरों को कैसी कठिन मिहनत करके गुजारा करना पड़ता है।

डाक्टर

अभी मैं पहली कल्पना पर विचार करता हूँ, इसके बाद दूसरी पर करूँगा। इसलिये मैं यह माने लेता हूँ कि तुमको अच्छी वैज्ञानिक शिक्षा मिली है। मान लो कि तुम डाक्टर बनना चाहते हो।

कल फटे-पुराने कपड़े पहिने एक आदमी किसी रोगी स्त्री को देखने के लिये तुम्हें बुला ले जाता है। वह तुमको ऐसे तंग गली-कूचों में से ले जाता है, जिनमें दो आदमियों का साथ-साथ चल सकना भी कठिन है। तुमको एक बदबूदार मकान में टिमटिमाते दीपक की रोशनी में ऊपर चढ़ना पड़ता है।। तुम दो, तीन, चार या पाँच गन्दे जीनों (सीढ़ियों) को चढ़कर एक अँधेरी ठंडी कोठरी में पहुँचते हो और वहाँ पर रोगी स्त्री को एक टूटी-सी चारपाई पर मैले चीथड़ों से ढका हुआ पाते हो पीले रंग के, मैले-कुचैले बच्चे पतले कपड़ों के भीतर ठण्ड से काँपते हुए आँखें फाड़-फाड़कर देख रहे हैं। स्त्री का पति उम्र भर किसी कारखाने में बारह-तेरह घंटे रोज काम करता रहा। अब वह तीन महीने से बेकार बैठा है, नौकरी छूट जाना उसके लिये कोई नई बात नहीं है, प्राय, हर साल या समय-समय

पर ऐसी घटना हुआ ही करती है। पर पहले जब वह बेकार रहता था तो उसकी स्त्री कुछ मेहनत-मजूरी कर लेती थी—शायद वह तुम्हारे ही घर पर चौका बर्तन करती रही हो—और पाँच-सात रुपया महीने कमा लेती थी। पर अब वह भी दो महीने से बीमार है और समस्त परिवार दुर्दशा के भीषण पंजे में फँसा हुआ है।

डाक्टर साहब, आपने यह तो आने के साथ ही समझ लिया कि इस स्त्री की सारी बीमारी सिर्फ शारीरिक दुर्बलता, पौष्टिक भोजन का अभाव और स्वच्छ हवा की कमी की है। आप इसके लिये क्या नुसखा तजवीज करेंगे? क्या, प्रतिदिन एक सेर दूध? शहर के बाहर स्वस्थ्यकर स्थान में घूमना-फिरना? अच्छे हवादार कमरे में सोना? कैसी विडम्बना है! अगर उसको इतनी सामर्थ होती तो ये उपाय बिना आपकी सलाह के बहुत पहिले कर लिये गये होते।

अगर तुममें कुछ सहृदयता का भाव है, अगर तुम खुलकर बातचीत करते हो, और यदि तुम्हारे चेहरे से ईमानदारी टपकती है, तो उन लोगों से तुमको बहुत-सी बातें मालूम हो सकती हैं। वे तुमको बतलावेंगे कि बगल की कोठरी में जो औरत इस बुरी तरह से खाँस रही है कि उसे सुनकर तुम्हारा दिल फटा जाता है, वह कपड़े साफ़ करनेवाली एक ग़रीब स्त्री है। नीचे की मंज़िल में रहने-

वाले सब बच्चे बुखार से पीड़ित हैं। सबसे नीचे की मंजिल में रहनेवाली धोबिन इस जाड़े के अन्त तक जिन्दा नहीं बचेगी। और बग़ल के मकान में रहनेवाले लोगों की दशा इससे भी बुरी है।

इन सब बीमार लोगों से तुम क्या कहोगे? क्या उनके लिये पौष्टिक भोजन, आब-हवा की तबदीली, हलका परिश्रम करना तजवीज़ करोगे? तुम चाहोगे अवश्य कि तुम ऐसा कर सको, पर तुम कहने का साहस नहीं कर सकते, और तुम दुःखी हृदय से दैव को कोसते हुए वापस चले आते हो।

दूसरे दिन जब कि अभी तक तुम उस नरक-कुण्ड में रहनेवालों के भाग्य पर विचार कर रहे हो, तुम्हारा साथी तुमको बतलाता है कि कल एक दरबान उसको बुलाने आया था और वह साथ में गाड़ी भी लाया था। वह उसे सुन्दर महल में रहनेवाली एक श्रीमतीजी के देखने को ले गया। उस रमणी को रात में नींद न आने की बीमारी है। उसने अपना तमाम जीवन बनाव-शृङ्गार दावतों, तमाशों, अपने बेवकूफ़ पति के साथ दाँत-किलकिल करने में बिताया है। तुम्हारे मित्र ने उसके लिये तजवीज किया—यथा सम्भव कृत्रिम आदतों का त्याग करना, सादा भोजन करना, स्वच्छ हवा में टहलना, शान्त स्वभाव रखना और अपने कमरे के भीतर हलकी कसरत करना।

एक इसलिये मर रही है कि उसे तमाम उम्र न कभी काफ़ी खाना मिला, न काफ़ी आराम। दूसरी इसलिये तकलीफ़ पा रही है कि उसे अपने जीवन में आज तक यही मालूम नहीं हुआ कि मेहनत करना किसे कहते हैं!

अगर तुम उन निर्बल चरित्र के व्यक्तियों में से हो, जो अपने को हर तरह की परिस्थिति के अनुकूल बना लेते हैं, जो अत्यन्त वीभत्स दृश्य को देखकर भी एक शोकसूचक निवास तथा शरबत के एक गिलास से चित्त को शान्त कर लेते हैं, तो धीरे-धीरे तुमको इन परस्पर विरोधी दृश्यों को देखने की आदत हो जायगी, तुम्हारे भीतर पशु-भाव का उदय होने लगेगा, तुम्हारा एकमात्र उद्देश्य सुख-लोलुप लोगों के बीच में रहना बन जायगा, जिससे तुमको कभी दुर्दशा-ग्रस्त लोगों के बीच में जाने का काम ही न पड़े। पर अगर तुम "आदमी" हो; अगर तुम अपने मनोभावों को कार्यरूप में परिणत करने की इच्छा-शक्ति रखते हो; अगर पशु-भाव ने तुम्हारे विवेक को नष्ट-भ्रष्ट नहीं कर दिया है, तो एक दिन तुम अपने मन में यह कहते हुए घर लौटोगे—"नहीं, यह अन्याय है, यह अधिक समय तक क़ायम नहीं रहना चाहिये। केवल रोगों का इलाज करने से काम नहीं चलेगा उनके पैदा होने के कारणों को ही रोकना चाहिये। अगर मनुष्यों को भोजन-वस्त्र की सुविधा हो जाय और वे शिक्षित

हो जायँ तो रोगियों की संख्या आधी ही रह जाय और आधी बीमारियाँ भी लुप्त हो जायँ चिकित्सा-शास्त्र चूल्हे में जाय! स्वच्छ हवा, पौष्टिक भोजन और साधारण परिश्रम—ये ही सबसे पहली बातें हैं। इनके बिना डाक्टरी की सब बातें चालबाज़ी और धोखेबाजी के सिवा कुछ नहीं है।

बस, जिस दिन यह बात तुम्हारी अक़ल में आ जायगी, उसी दिन तुम साम्यवाद को समझ जाओगे। फिर तुम इसको पूरी तरह से जानना चाहोगे, और अगर तुम परोपकार के सिद्धान्त के महत्त्व को कुछ भी समझते हो, अगर तुम एक स्वाभाविक दार्शनिक की भाँति प्रमाणों के साथ सामाजिक प्रश्नों पर विचार करोगे, तो अन्त में एक दिन तुमको साम्यवादियों के दल में मिल जाना होगा, और तुम सामाजिक क्रान्ति के लिये हमारी ही तरह उद्योग करने लगोगे।

वैज्ञानिक

पर शायद तुम कहो कि मुझको ऐसे व्यावहारिक धन्धे से कोई सम्बन्ध नहीं। मैं खगोल-विद्या, प्राणि-शास्त्र, या रसायन-शास्त्र में लगकर विज्ञान की उन्नति करूँगा। ऐसे काम का फल सदा अच्छा नहीं निकलेगा, भले ही यह हमको न मिलकर आनेवाली सन्तान को मिले।

सबसे पहले हमें यह समझ लेना चाहिये कि विज्ञान की उन्नति करने से तुम्हारा उद्देश्य क्या है? क्या यह उद्देश्य केवल आनन्द—उत्कृष्ट आनन्द—प्राप्त करना है, जो कि प्रकृति के अध्ययन से और अपनी मानसिक शक्तियों को किसी काम में लगाकर विकसित करने से मिलता है? उस दशा में मैं तुमसे पूछूँगा कि जो दार्शनिक अपना जीवन आनन्द के साथ व्यतीत करने के लिये विज्ञान का अध्ययन करता है, उसमें और एक शराबी में जो शराब के नशे से थोड़ी देर के लिये दिल की खुशी हासिल करता है, क्या फर्क है? इसमें सन्देह नहीं कि दार्शनिक ने अपने आनन्द का विषय अधिक बुद्धिमानी से चुना है, क्योंकि उससे शराब की अपेक्षा बहुत गहरा और बहुत स्थायी आनन्द मिलता है, पर इससे ज्यादा कुछ नहीं! दोनों ही व्यक्ति स्वार्थ पर निगाह रखते हैं और दोनों का उद्देश्य एक ही है, यानी व्यक्तिगत सुख प्राप्त करना।

पर नहीं, तुम कहोगे कि मैं अपने स्वार्थ के लिये यह काम नहीं करता। वरन् मैं विज्ञान की उन्नति के लिये, मनुष्य-जाति के हित के लिये यह काम करता हूँ, मेरे अन्वेषण का यही लक्ष्य रहेगा।

यह भी एक बड़ा मजेदार भ्रम है! हममें से जिस किसी ने पहले-पहल जब विज्ञान का कार्य आरम्भ किया

था, तो अवश्य ही एक बार इसका सहारा लिया था। पहले हम भी ऐसा ही कहा करते थे।

पर यदि दर-असल तुम मनुष्य-जाति का विचार करते हो और तुम्हारा उद्देश्य मनुष्य-समाज का हित साधन करना है, तो तुम्हारे सामने एक विकट प्रश्न पैदा होता है। तुम्हारे भीतर आलोचना करने का भाव कैसा भी कम क्यों न हो, तो भी तुम तुरन्त जान सकते हो कि आजकल हमारे समाज में विज्ञान सुखोपभोग का एक साधन मात्र बन गया है, जिससे थोड़े से लोग अपने जीवन को अधिक सुखी बनाते हैं, पर मनुष्य समाज का अधिकांश भाग उस तक पहुँच भी नहीं सकता।

सौ साल से ज्यादा समय व्यतीत हो गया, जब कि विज्ञान ने विश्वब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का निश्चयात्मक रूप से निर्णय कर दिया था। पर कितने लोगों ने उन सिद्धान्तों का अध्ययन किया है, या उस सम्बन्ध में कुछ वैज्ञानिक और आलोचनात्मक ज्ञान रखते हैं ? ऐसे लोगों की संख्या शायद कुछ हजार होगी। पर करोड़ों मनुष्य तो अभी तक दुराग्रह और अन्धविश्वासों में ही फँसे हैं और इस कारण हमेशा धार्मिक ठगों के द्वारा लूटे जाते हैं, उनको देखते हुए ज्ञानी लोगों की संख्या दाल में नमक के भी बराबर नहीं है।

अगर हम इससे और आगे बढ़कर देखें तो हमको विचार करना चाहिये कि विज्ञान ने शारीरिक और चरित्र सम्बन्धी ज्ञान को फैलाने के लिये क्या किया है ? विज्ञान हमको बतलाता है कि अपने शरीरों का स्वास्थ्य क़ायम रखने के लिये हमको किस तरह रहना चाहिये ; और किस तरह देश में बसनेवाली असंख्य जनता को अच्छी दशा में रखा जा सकता है। पर क्या इन दोनों बातों में किया गया अपार परिश्रम केवल किताबों के भीतर बंद रहकर बेकार नहीं पड़ा है ? इसका कारण क्या है ? कारण यह है कि आजकल थोड़े से वैभवशाली व्यक्ति ही विज्ञान से लाभ उठा सकते हैं। सामाजिक असमानता के कारण आजकल मनुष्य-जाति दो भागों में बँटी है—एक मज़दूरी करनेवाले गुलाम और दूसरे धन-सम्पत्ति के स्वामी पूँजीपति। इस भेद के कारण विवेकयुक्त जीवन व्यतीत करने की सब शिक्षाएँ सौ में से नब्बे मनुष्यों के लिये एक दिल दुखानेवाले मज़ाक के सिवाय और कुछ अर्थ नहीं रखतीं।

मैं तुमको और भी बहुत से उदाहरण बतला सकता हूँ, पर बात को ज्यादा बढ़ाना ठीक नहीं। अगर तुम अपनी तंग कोठरी से, जिसकी खिड़कियों पर धूल जमी हुई है, और जिसमें रखी हुई पुस्तकों की आलमारियों पर सूर्य का

प्रकाश भी नहीं पड़ता, बाहर निकलकर चारों तरफ़ आँख खोलकर देखोगे तो तुमको क़दम-क़दम पर नये प्रमाण मिलेंगे, जिनसे इस मत का समर्थन होगा।

इस समय हमको विज्ञान-सम्बन्धी ज्ञान और आविष्कारों की वृद्धि करने की बिलकुल जरूरत नहीं है। सबसे जरूरी बात यह है कि जो ज्ञान अभी तक प्राप्त हो चुका है, उसको फैलाया जाय, उसको हर रोज के जीवन में काम में लाया जाय, और उसे सर्वसाधारण तक पहुँचाया जाय। हमको ऐसा बन्दोबस्त करना चाहिए कि मनुष्य मात्र विज्ञान के सत्य सिद्धान्तों को जान सकें और काम में ला सकें। इस प्रकार विज्ञान एक शौकिया चीज न रहेगा, वरन् मनुष्य के जीवन का आधार बन जायगा। यही न्यायानुकूल बात है इन्साफ़ का यही तकाजा है।

इसके सिवाय विज्ञान के हित की दृष्टि से भी यह आवश्यक है। विज्ञान की असली उन्नति तभी होती है, जब कि जनसमूह उसके सिद्धान्तों का स्वागत करने को तैयार हो। यन्त्र-द्वारा उष्णता की उत्पत्ति का सिद्धान्त अठारहवीं शताब्दी में स्थिर हो चुका था पर अस्सी वर्ष तक वह किताबों में ही बन्द पड़ा रहा, और वह तभी काम आ सका जब कि जनता में भौतिकशास्त्र का काफ़ी ज्ञान फैल गया। डार्विन ने प्राणियों के विकास का जो सिद्धान्त मालूम

किया, वह तीन पुश्त के बाद विद्वानों द्वारा स्वीकार किया गया, और वह भी तब, जब कि उनपर सार्वजनिक मत का दबाव पड़ा। कवि और चित्रकार की तरह दार्शनिक के अस्तित्व का आधार भी वह समाज है, जिसमें वह रहता है और अपने उपदेशों का प्रचार करता है।

पर जब इस प्रकार के विचार तुम्हारे भीतर भर जायँगे, तो तुम समझ जाओगे कि सबसे अधिक महत्व की बात वर्तमान स्थिति में जड़मूल से परिवर्तन करना है। क्योंकि इस स्थिति के कारण थोड़े से दार्शनिकों के भीतर वैज्ञानिक सिद्धान्त ठूँस-ठूँस कर भर दिये जाते हैं और बाकी लोग उसी दशा में पड़े रहते हैं, जिसमें वे हज़ार-पाँच-सौ वर्ष पहले थे! अर्थात् वे गुलामों या निर्जीव मशीनों की भाँति बने रहते हैं, और सत्य सिद्धान्तों के समझ सकने में असमर्थ रहते हैं। जिस दिन तुम इस महान, गम्भीर उदारतापूर्ण और वैज्ञानिक सचाई को पूरी तरह से समझ जाओगे उसी दिन से तुमको खाली विज्ञान में कुछ मजा न आयेगा। तुम उन उपायों को जानने के लिये उद्योग करने लगोगे, जिनसे ऐसा परिवर्तन हो सके अगर तुम इस जाँच को उसी निष्पक्षता के साथ करोगे, जिसकी सहायता से अब तक वैज्ञानिक अन्वेषणों को करते रहे हो, तो तुम अवश्य ही साम्यवाद के पक्ष को स्वीकार कर लोगे। तुम दिखावटी

और भ्रमपूर्ण तर्कों को त्यागकर साम्यवादियों के साथी बन जाओगे। तब उन थोड़े से लोगों के लिये आनन्द के साधन जुटाने का उद्योग करना व्यर्थ समझकर, जिनके पास अब भी ऐसे साधनों का बहुत बड़ा हिस्सा मौजद है, तुम अपने ज्ञान और शक्ति को अत्याचार-पीड़ितों की सेवा में लगाओगे।

यह विश्वास रखो कि जब कर्तव्य-पालन का भाव पैदा हो जायगा और तुम्हारे विचारों और कार्य्यों में सच्ची एकता क़ायम हो जायगी, तो तुमको अपने भीतर ऐसी शक्तियाँ मालूम होने लगेंगी, जिनका तुमको पहले स्वप्न में भी पता न था। अन्त में एक दिन ऐसा भी आयेगा—और वह भी शीघ्र हो—उस समय तक हमारे वर्तमान शिक्षक भले ही जीवित न रहें—जब कि वह परिवर्तन जिसके लिये तुम उद्योग कर रहे हो, उत्पन्न हो जायगा। उस समय साधारण जनता भी विज्ञान सम्बन्धी कार्यों में सहायता करने लगेगी। करोड़ों मज़दूर भी संसार की ज्ञानवृद्धि के लिये परिश्रम करेंगे। इसके फल से विज्ञान और कलाकौशल की इतनी शीघ्रता से उन्नति होने लगेगी, जिसके मुकाबले में वर्तमान समय की मन्दगति बच्चों के खेल के समान जान पड़ेगी। तब तुम्हें विज्ञान का मज़ा मालूम होगा, क्योंकि उस समय इस आनन्द का उपभोग तुम अकेले ही न करोगे, बल्कि

तुम्हारे साथ साधारण जनता भी करेगी।

वकील

मान लो, तुमने क़ानून की परीक्षा पास की है और वकालत का पेशा आरम्भ करनेवाले हो। सम्भवतः तुमको अपने भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में भ्रमपूर्ण धारणाएँ होंगी। मैं मानता हूँ कि तुम एक श्रेष्ठ विचारवाले व्यक्ति हो और परोपकार का महत्व भी अच्छी तरह समझते हो। शायद तुम सोचते होगे कि—"मैं जीवन भर सब प्रकार के अन्याय का लगातार और बलपूर्वक विरोध करता रहूँगा, अपनी समस्त योग्यता को क़ानून की विजय के लिये खर्च करूँगा और जनता के सामने सर्वोच्च न्याय का आदर्श उपस्थित करूँगा—क्या कोई पेशा इससे श्रेष्ठ हो सकता है?" इस प्रकार तुम अपने और अपने पसन्द किये हुए पेशे के भीतर विश्वास रखते हुए जीवन-क्षेत्र में प्रवेश करते हो।

बहुत अच्छा, हम अदालती रिपोर्टों के पन्ने पलटकर इस बात की जाँच करते हैं कि वास्तविक दशा क्या है?

अदालत के सामने एक मालदार ज़मींदार आता है, और वह झोंपड़ी में रहनेवाले किसान को लगान न दे सकने के कारण ज़मीन से बेदख़ल कराना चाहता है। क़ानूनी निगाह से मुक़द्दमे में किसी प्रकार की उलझन नहीं, क्योंकि जब ग़रीब किसान लगान नहीं चुका सकता, तो

उसे ज़मीन पर से क़ब्ज़ा छोड़ देना चाहिये। पर अगर हम इस मामले में असली घटनाओं की जाँच करते हैं, तो कुछ और ही पता चलता है। ज़मींदार अपनी आमदनी को ऐश आराम के कामों में खुले हाथों बरबाद करता रहा है, और किसान को उम्र भर हर रोज़ सख्त काम करना पड़ा है। ज़मींदार ने अपनी ज़मींदारी की उन्नति के लिये किसी तरह की कोशिश नहीं की, तो भी पचास वर्ष के भीतर उसकी ज़मीन का दाम पहले से तिगुना हो गया है। ज़मीन का दाम बढ़ने का कारण है एक नई रेलवे लाइन का बनना, या किसी बड़ी सड़क का पास होकर निकल जाना, या दल-दल को सुखाकर सूखी ज़मीन बना लेना, या ऊसर ज़मीन को खेती के लायक बनाना, इत्यादि। पर जिस किसान ने अधिकांश में यह सब उन्नति की, उसे इससे कुछ फ़ायदा नहीं हुआ, वह बरबाद हो गया, वोहरों के फन्दे में फँसकर गले तक कर्ज़ में डूब गया, और अब उसमें ज़मीन का लगान अदा करने की भी सामर्थ नहीं रही। क़ानून सदा जायदादवाले के पक्ष में रहता है, उसका अर्थ स्पष्ट है और उसके अनुसार ज़मींदार न्याय पर है। पर तुम्हारा न्याय का भाव अभी कानूनी किस्सों से कुण्ठित नहीं हो गया है इसलिये तुम इस मामले में क्या करोगे? क्या तुम मान लोगे कि किसान को धक्के देकर निकाल दिया

जाय ? क्योंकि क़ानून की यही मंशा है। अथवा तुम इस बात पर जोर दोगे कि जमींदार को जमीन की तमाम बढ़ी हुई आमदनी किसान को वापस कर देनी चाहिये, क्योंकि वह उसी की मेहनत का फल है। यही न्याय का निर्णय है। तुम कौन-सा पक्ष स्वीकार करोगे ? क़ानून के अनुकूल पर न्याय के विरुद्ध; या न्याय के अनुकूल और क़ानून के विरुद्ध ?

अथवा जब किसी कारख़ाने के मालिक के ख़िलाफ़ मजदूरों ने बिना नोटिस दिये हड़ताल कर दी हो, तब तुम किसका पक्ष लोगे ? क्या तुम क़ानून का पक्ष लोगे ? इसका अर्थ होगा ऐसे मालिक का पक्ष लेना, जिसने किसी हलचल के मौक़े से, फ़ायदा उठाकर बेहद नफ़ा लिया है ? अथवा तुम क़ानून के ख़िलाफ़ चलकर मजदूरों का पक्ष लोगे, जिनको कभी आठ या बारह आने रोज़ाना से ज्यादा मजदूरी नहीं दी गई, और जिनके स्त्री-बच्चे उनकी आँखों के सामने ही भूखों मर चुके हैं ? क्या तुम उस जालसाजी से भरे कानून का पक्ष ग्रहण करोगे जो कि, 'इक़रारनामे (प्रतिज्ञा) की स्वाधीनता' का समर्थन करता है ? अथवा तुम सच्चे न्याय का समर्थन करोगे ? उसके अनुसार तो जो इक़रारनामा एक ख़ूब भरे पेटवाले और एक ऐसे आदमी के बीच में हुआ हो, जिसे केवल प्राण-रक्षा के

लिये कुछ भी मज़दूरी करने की आवश्यकता है, अथवा जो ताक़तवर और कमज़ोर के बीच में हुआ हो जो इक़रार-नामा ही नहीं समझा जा सकता।

एक और मुक़द्दमा देखो। किसी बड़े शहर में एक आदमी बाजार में फिर रहा है। वह किसी दुकान से दो सेर अन्न चुराकर भागता है। पकड़े जाने पर जब उससे पूछा गया तो मालूम हुआ कि वह एक अच्छा कारीगर है, जो विना नौकरी के फिर रहा है, और उसे तथा उसके बाल-बच्चों को चार दिन से एक टुकड़ा भी खाने को नहीं मिला! दुकानदार से अनुरोध किया जाता है कि वह अप-राधी पर दया करके उसे छोड़ दे, पर वह इन्साफ़ की दुहाई देता है। वह मुक़द्दमा दायर करता है और उस शख्स को छः महीने की जेल हो जाती है। क्योंकि क़ानून लिखने-वाले अन्धे ऐसा ही कह गये हैं! क्या तुम्हारी अन्तरात्मा में समाज के प्रति विद्रोह का भाव पैदा नहीं होता, जब कि तुम हर रोज इस प्रकार के फैसले होते देखते हो?

क्या तुम इस आदमी के खिलाफ़ कानून कार्रवाई करना उचित बतलाओगे, जिसका पालन-पोषण दूषित रीति से हुआ है, जिसे बचपन से ही खोटे काम करने की आदत डाली गई है, जिसने अपनी तमाम उमर में सहानुभूति का एक शब्द भी नहीं सुना, और अन्त में जिसने कुल जमा

एक रुपये के लालच से अपने पड़ोसी की हत्या कर डाली ? क्या तुम कहोगे कि उसको फांसी दे दी जाय, अथवा इससे भी बढ़कर, बीस वर्ष के लिये कैद कर दी जाय ? क्योंकि तुम अच्छी तरह जानते हो कि वह अपराधी होने के वजाय एक पागल आदमी है, और हर हालत में उनके कसूर के लिये हमारा तमाम समाज दोषी है।

क्या तुम यह दावा करोगे कि ये कपड़ा बुननेवाले मज़दूर, जिन्होंने घोर निराशा के वश होकर मिल में आग लगा दी, कैदखाने में डाल दिये जायँ ? अथवा यह शख्स, जिसने एक छत्रधारी-हत्यारे पर गोली चला दी, जन्म-कैद की सजा पावे ? अथवा इन बागियों को, जिन्होंने मोरचे के ऊपर स्वाधीनता का झंडा खड़ा किया, गोली से मार दिया जाय ? नहीं, एक हजार बार नहीं !

अगर तुम उन बातों को दुहराने के वजाय, जो तुमको स्कूलों और कालेजों में पढ़ाई गई हैं, अपनी अक़ल से काम लोगे; अगर तुम क़ानून की जाँच-पड़ताल करोगे, और उन निरर्थक किस्सों को अलग फेंक दोगे, जो कि क़ानून की असलियत को ढँकने के लिये बनाये गये हैं, तो तुमको मालूम हो जायगा कि कानून की असलियत यही है कि, बलवानों के अधिकार का समर्थन किया जाय। यह क़ानून उन सब अत्याचारों को पवित्र बतलाता है जिनका वर्णन

मनुष्य-जाति के प्राचीन और रक्त-प्लावित इतिहास में पाया जाता है। जब तुम इस रहस्य को समझ जाओगे, तो तुमको क़ानून के प्रति बड़ी घृणा हो जायगी। तुम समझ जाओगे कि पुस्तकों में लिखे क़ानून का सेवक बने रहने से तुमको हर रोज अपनी अन्तरात्मा के क़ानून का विरोध करना पड़ता है। पर इस प्रकार की दुविधा-जनक परिस्थिति सदा कायम नहीं रह सकती। अन्त में या तो तुम अपनी अन्तरात्मा को चुप करके पूरे धूर्त और मक्कार बन जाओगे, अथवा तुम परम्परा की लकीर पर चलना छोड़ दोगे, और तमाम आर्थिक तथा राजनैतिक अन्यायों का पूरी तरह से नाश करने के लिये हम लोगों के साथ मिलकर काम करने लगोगे।

पर तब तुम एक साम्यवादी कहे जाओगे और तुम्हारी गणना क्रान्तिकारियों में होगी।

इञ्जीनियर

तुम एक नवयुवक इञ्जीनियर हो और वैज्ञानिक आविष्कारों का उपयोग व्यापार, और कारीगरी में करके मजदूरों की दशा सुधारने का स्वप्न देख रहे हो। वास्तव में अभी तुम्हें बहुत बार धोखे खाना पड़ेगा। पर वह दिन दूर नहीं, जब तुम्हारा यह भ्रम दूर हो जायगा। तुम अपनी तरुण-बुद्धि और शक्ति को लगाकर एक नई रेलवे की योजना

तैयार करते हो, जो बड़े ऊँचे स्थानों का चक्कर लगाकर, भारी पहाड़ों के हृदय को छेदकर, दो अलग-अलग देशों को शामिल कर देती है, जिनको प्रकृति ने भिन्न बना रखा था। पर जब काम शुरू होता है, तो तुम देखोगे कि मजदूरों के दल के दल अंधेरी सुरङ्गों के भीतर भूख-प्यास तथा बीमारी से मर रहे हैं। बाकी मज़दूर थोड़े से पैसे और क्षय की बीमारी की बीज लेकर घर लौट रहे हैं। तुच्छ लालच के कारण एक-एक गज रेलवे लाइन मनुष्यों को बलि देकर बनाई जाती है। अन्त में जब लाइन तैयार हो जाती है, तो तुम देखते हो कि तुम्हारी यह रेलवे लाइन दूसरे देश पर हमला करने के लिये तोपें और सेनाएँ भेजने के काम में लाई जा रही है!

दूसरा उदाहरण देखो। तुम अपनी तरुण अवस्था को एक ऐसा आविष्कार करने में लगाते हो, जिससे माल सहज में बनाया जा सके। बहुत कोशिशों के बाद, बहुत रातों को जाग-जागकर, अन्त में तुम अपने आविष्कार में सफल होते हो। तुम उसको व्यवहार में लाते हो और उसका नतीजा तुम्हारे अनुमान से कहीं बढ़कर निकलता है। दस-बीस हजार प्राणी नौकरी से अलग कर दिये जाते हैं, केवल थोड़े से बच्चों को नौकर रखा जाता है और उनकी हालत भी निर्जीव मशीनों की सी बना दी जाती है। दो-

चार या दस-बीस मालदार कारखानेवाले करोड़ों रुपया पैदा कर लेते हैं और राजसी ठाट से भोग-विलास करने लगते हैं। क्या यही तुम्हारा लक्ष्य था—

इसी प्रकार जब तुम आजकल की अन्य यंत्र-विद्या सम्बन्धी उन्नति पर विचार करोगे तो तुमको मालूम होगा कि सीने की मशीन के आविष्कार से सिलाई का काम करनेवाली ग़रीब औरतों का ज़रा भी लाभ नहीं हुआ। नई तरह की छेद करने की मशीन बन जाने पर भी खान का काम करनेवाले मज़दूर को गठिया की बीमारी के कारण मरना पड़ता है। अगर तुम सामाजिक मामलों पर वैसे ही स्वाधीन भाव से विचार करोगे, जिससे यंत्र-विद्या सम्बन्धी जाँच पड़ताल करते हो, तो तुम अवश्य इस निर्णय पर पहुँचोगे कि जब तक दुनियाँ में निजी जायदाद और मज़दूरी की प्रथा क़ायम है, तब तक हर एक नया आविष्कार मज़दूरों का भला करने की अपेक्षा उनकी गुलामी को ही मजबूत करता है। उसके कल से श्रमजीवियों की स्थिति और भी नीच बन जाती है और व्यापार-संकट बार-बार आने लगता है। उसके द्वारा केवल वे ही आदमी फ़ायदा उठाते हैं, जिनको इस समय भी सब तरह के बड़े-से-बड़े सुख प्राप्त हैं।

जब तुम एक बार इस नतीजे पर पहुँच गये, तब तुम

क्या करोगे ? या तो तुम झूठी दलीलों से अपनी अन्तरात्मा को चुप करने लगोगे और अन्त में एक दिन अपनी युवावस्था के सच्चे विचारों को सदा के लिये विदा करके केवल अपने लिये ऐश-आराम के साधन प्राप्त करने की कोशिश करने लगोगे। तब तुम ग़रीबों को लूटकर खानेवालों के दल में मिल जाओगे। पर यदि तुम्हारे भीतर सहृदयता का भाव है, तो तुम अपने मन में कहोगे—"नहीं, यह समय आविष्कार करने का नहीं है। पहले पैदावार तथा सम्पत्ति के वर्तमान अधिकार करने को बदलने का उद्योग करना चाहिये। जब निजी जायदाद के नियम का अन्त हो जायगा, तभी यंत्र-विद्या की उन्नति होने से मनुष्य मात्र फ़ायदा उठा सकेंगे। और तभी ये असंख्यों मजदूर; जो आजकल केवल मशीनों के पुरजों के समान बने हुए हैं, विचारशील प्राणी बन सकेंगे। उस समय वे अध्ययन द्वारा विकसित तथा शारीरिक परिश्रम द्वारा तीव्र बनी हुई अपनी बुद्धि का उपयोग कला-कौशल की उन्नति में करेंगे। इससे पचास वर्ष के भीतर कला-कौशल की इतनी आश्चर्य-जनक तरक़्क़ी हो सकेगी जिसकी इस समय हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

शिक्षक

अब रहे स्कूल-मास्टर, सो उनसे मैं क्या कहूँ मैं उस

स्कूल-मास्टर, से कुछ नहीं कहना चाहता जो अपने पेशे को बेगार की तरह समझता है। इसके विपरीत मैं उस स्कूल-मास्टर से बात करना चाहता हूँ, जो कि आमोद-प्रिय छोटे-छोटे बच्चों के दल के बीच में बैठ उनकी विनोद-पूर्ण निगाहों और आनन्ददायक हँसी से प्रसन्न होता है जो कि उन छोटे बच्चों के दिमाग़ों में मनुष्यत्व के उन आदर्शों का बीज बोना चाहता है, जिनका वह अपनी युवावस्था में विचार किया करता था।

प्राय: मैं तुमको रंजीदा देखता हूँ और मैं जानता हूँ कि तुम्हारी चिन्ता का कारण क्या है ? इसी दिन तुम्हारे एक प्यारे विद्यार्थी ने जो यद्यपि भाषा में बहुत होशियार नहीं है पर जिसका हृदय बड़ा विशाल है—महाराणा प्रताप की कहानी को बड़े ज़ोश के साथ पढ़कर सुनाया। जब उसने नीचे लिखी पंक्तियों को पढ़ा तो उसकी आँखें चमक रही थीं और ऐसा मालूम होता था कि वह उसी दम तमाम अत्याचारियों का नामो-निशान मिटा देना चाहता है।

"मारू वाजे बजैं कहूँ धौंसा घहराहीं।
उड़हिं पताका शत्रु हृदय लखि-लखि थहराहीं॥
हैं ये कितने नीच कहा इनको वल भारी।
सिंह जगे कहुँ स्वान ठहरिहैं समर मँझारी॥"

पर जब वही विद्यार्थी घर लौटकर गया, तो उसके

माता-पिता ने, उसके चाचा ने, कस्बे के बड़े सेठ या पुलिस के थानेदार को सलाम न करने के लिये उसे बहुत डाँटा फटकारा। उन्होंने उसको दुनियाँदारी, अधिकारियों की इज्जत, अपने से ऊँचे दर्जे के लोगों से विनय के सम्बन्ध में बड़ा लम्बा लेक्चर सुनाया, अन्त में उसने महाराणा प्रताप की जीवनी को उठाकर अलग रख दिया और 'सांसारिक उन्नति के उपाय' नामक पुस्तक को पढ़ना शुरू किया।

अभी कल ही तुमसे किसी ने कहा है कि तुम्हारे सब होनहार विद्यार्थी उलटे रास्ते पर चल रहे हैं। उनमें से एक सिवाय अफ़सर बनने का स्वप्न देखने के और कुछ नहीं करता। दूसरा किसी बड़े आदमी का कृपापात्र बनकर गरीबों को लूटता है। तुमने इन लोगों से न जाने कैसी-कैसी आशाएँ की थीं। अब अपने आदर्शों और दुनियाँ को असलियत के अन्तर को देखकर तुम चिन्ता में पड़े हुए हो।

तुम कुछ समय तक चिन्ता करते रहते हो। पर मैं समझता हूँ कि साल-दो-साल बाद ऐसा समय आयेगा, जब कि बार-बार निराश होकर अन्त में तुम अपने आदर्श ग्रन्थों को आलमारी में बन्द कर दोगे। तुम कहने लगोगे कि महाराणा प्रताप आदमी तो बड़ा स्वाभिमानी और

देशभक्त था, पर साथ ही कुछ सनकी भी था। तुम विचार करने लगोगे कि कविता विश्राम के समय में बहुत अच्छी चीज़ है, खासकर उस हालत में, जब कि एक आदमी दिन भर लड़कों को त्रैराशिक पञ्चराशिक का हिसाब समझाते-समझाते थक गया हो। पर तो भी कवि लोग कल्पना के राज्य में विचरण करते हैं, और उनके विचारों से जीवन-निर्वाह में कुछ मदद नहीं मिल सकती, और न इन्सपेक्टर आफ़ स्कूल्स के दौरे के समय उनसे कुछ लाभ हो सकता है।

अथवा इसके विरुद्ध यह होगा कि तुम्हारे युवावस्था के स्वप्न बड़ी उम्र हो जाने पर दृढ़ विश्वास के रूप में परिणत हो जायँगे। तुम चाहोगे कि मनुष्य मात्र को, चाहे वे स्कूल में पढ़ते हों या नहीं, विस्तृत और मनुष्योचित शिक्षा दी जाय। पर यह देखकर कि ऐसा हो सकना वर्तमान स्थिति में असम्भव है, तुम वर्तमान सामाजिक संगठन की जड़ पर ही कुठाराघात करने लगोगे। तब तुम शिक्षा-विभाग द्वारा नौकरी से अलग कर दिये जाओगे, तुमको स्कूल छोड़कर हम लोगों के बीच में आना पड़ेगा, और हमारे ही साथ काम करना पड़ेगा। तुम दूसरे लोगों का, जो उम्र तुमसे ज्यादा होने पर भी योग्यता में तुमसे कम हैं, समझाओगे कि ज्ञान कैसी मनोहर वस्तु है, मनुष्य-समाज को कैसा होना चाहिये अथवा वह कैसा, बन सकता

है। तुम साम्यवादियों के साथ मिलकर वर्तमान सामाजिक प्रथा को जड़-मूल से बदलने के लिये उद्योग करने लगोगे, और ऐसा प्रयत्न करोगे, जिससे संसार के लिए सच्ची एकता, सच्चा भ्रातृभाव और अनन्त समय तक कायम रहनेवाली स्वाधीनता प्राप्त की जा सके।

कला-विशारद

अन्त में मैं तरुण कलाविशारद, मूर्तिकार, चित्रकार, कवि, संगीतज्ञ आदि से पूछता हूँ कि क्या तुम नहीं देखते हो कि जो प्रज्वलित अग्नि तुम्हारे पूर्वजों के दिलों में उत्तेजना फूँका करती थी, वह आजकल के लोगों में नहीं पाई जाती और कला के क्षेत्र में साधारण और विशेषता-हीन कृतियों की ही बहुतायत देखने में आती है?

पर इसके सिवा और हो भी क्या सकता है? प्राचीन काल की घटनाओं को फिर से अवलोकन करने से, या नवीन प्रकृति के दृश्यों का निरीक्षण करने से जो मानसिक प्रसन्नता प्राप्त होती है, उसी से प्रेरित होकर मध्यकालीन युग के प्रसिद्ध चित्रों और मूर्तियों की रचना की गई थी। पर ये साधन इस समय मौजूद नहीं हैं। साथ ही किसी क्रान्तिकारी आदर्श के सामने न होने से कला में जीवन भी नहीं पाया जाता। इन कारणों से हमारी कला का उद्देश्य सिर्फ नक़ल करना रह गया है। हम बड़ी मेहनत करके

पत्तों पर पड़ी ओस की बूँदों का चित्र खींचते हैं, गाय के पैर की जैसी की तैसी नक़ल तैयार करते हैं अथवा गन्दे नालों की दम घुटाने वाली गंदगी का, या किसी ऊँचे दर्जे की वेश्या के विलासभवन का गद्य या पद्य में बारीकी के साथ वर्णन करते हैं।

तुम पूछोगे कि—'यदि ऐसा है तो क्या किया जा सकता है?' मेरा जवाब यह है कि तुम अपने भीतर जो प्रज्ज्वलित अग्नि बतलाते हो, अगर वह धुआँ फैलाने वाली धुंधली बत्ती के सिवाय और कुछ नहीं है, तो तुम उसी तरह काम करते रहो, जैसे अब तक करते रहे हो। उस दशा में तुम्हारी कला का शीघ्र ही पतन होने लगेगा, और वह व्यापारियों की दुकानों को सजाने का, या थर्डक्लास नाटक-घरों के लिये नाटक तैयार करने का, या बच्चों का जी बहलानेवाली कहानियाँ लिखने का साधन-मात्र बन जायगी। अब भी तुममें से अधिकांश लोग उसी रास्ते पर चल रहे हैं और तेजी के साथ आगे बढ़ते जाते हैं।

पर यदि तुमको मनुष्य-जाति के प्रति सहानुभूति है, तुम्हारी हृदयतंत्री उनके दुःख-सुख के साथ बजती है, अगर एक सच्चे कवि की भाँति तुम जीवन-संगीत को सुनते हो तो तुमको और ही रास्ते पर चलना पड़ेगा। उस दशा में इस शोक-समुद्र का अवलोकन करते हुए, जिसकी ऊँची लहरें तुम्हारे

चारों ओर उठ रही हैं, इन असंख्यों लोगों को भूख की ज्वाला से अपने सामने मरते देखकर, इन खानों में भरे हुए लोगों के शवों को देखकर, इन मोर्चों पर पड़ी हुई छिन्न-भिन्न मनुष्य-देहों के ढेरों को देखकर, इन निर्वासितों को देखकर, जो लम्बी-लम्बी कतारों में निर्जन देशों और कालेपानी में अपने शरीरों को गलाने के लिये जा रहे हैं, इस निराशाजनक युद्ध को देखते हुए जिसमें हारनेवालों का कष्टजनित चीत्कार और जीतनेवालों की धूमधाम स्पष्ट सुनाई दे रही है, तुम हरगिज़ उदासीन नहीं बने रह सकते। तुम अवश्य आगे आओगे और अत्याचार पीड़ितों का पक्ष ग्रहण करोगे, क्योंकि तुम जानते हो कि 'सत्यम्' 'शिवम्' 'सुन्दरम्' उन्हीं लोगों के पक्ष में है, जो कि प्रकाश, मनुष्यता और न्याय के लिये संग्राम करते हैं।

हमें क्या करना चाहिए ?

अन्त में तुम मुझसे कहोगे—"बस, चुप रहो ! यह कैसी आफत है ! अगर विज्ञान के सिद्धान्तों का अनुशीलन करना अपना शौक पूरा करना है, अगर डाक्टरी लोगों को धोखा देना है, अगर क़ानूनी-पेशे का अर्थ अन्याय फैलाना है, अगर यन्त्र-सम्बन्धी आविष्कार केवल लोगों को लूटने के साधन हैं, अगर स्कूल सच्ची व्यावहारिक शिक्षा के अभाव के कारण बन्द कर देने लायक हैं, अगर कला कोई

क्रांतिकारी आदर्श न होने के कारण पतन को प्राप्त होती है—तो अब तुम्हीं बतलाओ कि मैं आखिर क्या करूँ?"

अजी, बहुत काम करने के लिये पड़ा है। एक चित्ताकर्षक काम, एक ऐसा काम जिसमें तुम्हारा आचरण सर्वथा तुम्हारी अन्तरात्मा के अनुकूल रहेगा, एक ऐसा ध्येय जो श्रेष्ठ से श्रेष्ठ और अत्यन्त शक्तिशाली आत्मा के भीतर भी उत्साह भर सकता है! अब मैं बतलाता हूँ कि वह काम कौन-सा है?

तुम्हारे लिये सिर्फ़ दो ही रास्ते खुले हैं। या तो तुम हमेशा के लिये अपनी अन्तरात्मा की, अपने विवेक की पुकार को, धोखे में डालते रहोगे, और अन्त में एक दिन कह दोगे—"जब तक मैं सब तरह से आनन्द कर रहा हूँ, और जब तक जनता ऐसी मूर्ख है कि वह मेरे रास्ते में बाधा नहीं डालती, तब तक मनुष्य-जाति को चूल्हे में जाने दो।" यदि ऐसा न हुआ, तो तुम साम्यवादियों में मिल जाओगे, और उनके साथ वर्तमान समाज का जड़मूल से परिवर्तन करनेके लिये प्रयत्न करने लगोगे। अब तक हमने जो विश्लेषण (जाँच-पड़ताल) किया है, उससे हम इसी निर्णय पर पहुँचते हैं। हर एक बुद्धिमान व्यक्ति, जो अपने चारों ओर की दशा को निष्पक्ष भाव से निरीक्षण करेगा, और जो पुरानी शिक्षा से पैदा होनेवाली भ्रमपूर्ण युक्तियों और मित्रों

को स्वार्थमयी सम्मतियों पर ध्यान न देगा, वह अवश्य ही इसी युक्तिसङ्गत नतीजे पर पहुँचेगा।

जब हम एक बार इस नतीजे पर जा पहुँचे, तो यह प्रश्न उठता है कि "अब क्या करना उचित है?"

इसका उत्तर बहुत सहज है। उस संगति और परिस्थिति से अलग हो जाओ, जिसमें तुम रहते हो, और जिसमें आमतौर पर मिहनत करनेवाले किसान और मजदूरों को 'जानवर' के नाम से पुकारा जाता है। तुम साधारण आदमियों के बीच में रहने लगो, और तुम्हारा प्रश्न अपने-आप हल हो जायगा।

श्रमजीवी आन्दोलन

तुम देखोगे कि इंगलैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, अमेरिका आदि सभी छोटे बड़े देशों में दो अलग-अलग दल मौजूद है उनमें से एक ऐसे लोगों का है जो सब तरह से आराम में हैं और दूसरा जुल्म सहनेवालों का है। इस कारण इन तमाम देशों के मजदूरों में एक जोरदार आन्दोलन पैदा हो रहा है। इस आन्दोलन का उद्देश्य सम्पत्तिशाली दल को चलाई हुई गुलामी को सदा के लिये नष्ट कर देना और न्याय तथा समानता के आधार पर एक नई समाज की नींव रखना है। अब जन-समूह का काम केवल अपनी शिकायतों के कह देने से

नहीं चल सकता। पुराने ज़माने के निरंकुश राजाओं के नीचे दबे हुए किसान जिन व्यथापूर्ण गीतों को गाकर अपने दिल को समझाया करते थे, अब उनके द्वारा लोगों का असंतोष दूर नहीं हो सकता। अब लोग अपने परिश्रम का पूरा मूल्य समझते हुए काम करते हैं, यद्यपि उनके अधि-कार के रास्ते में एक नहीं, अनेकों बाधाएँ मौजूद हैं। वे सदा इसी बात पर ग़ौर किया करते हैं कि किस उपाय द्वारा वर्तमान दशा में ऐसा परिवर्तन हो सकता है जिससे दुनियाँ में सब का जीवन सुखमय हो जाय। क्योंकि वर्तमान दशा में तो तीन चौथाई मनुष्य जाति का जीवन शाप ग्रस्त अथवा दैवी कोप से पीड़ित के समान हो रहा है। आजकल के लोग समाज-शास्त्र की कठिन समस्याओं पर विचार करते हैं और अपने निर्मल स्वाभा-विक ज्ञान, अपने निरीक्षण, और अपने दुःखमय अनुभव से उनको हल करने का प्रयत्न करते हैं। अपने ही समान दुर्दशाग्रस्त अपने दूसरे साथियों का सहयोग प्राप्त करने के लिये वे अपना दल बनाते हैं और अपना संगठन करने की कोशिश करते हैं। वे संस्थाएँ बनाते हैं, जिनका काम थोड़े से चन्दे द्वारा कठिनाई के साथ चलता है। वे दूसरे देशों में रहनेवाले अपने हमपेशा भाइयों के साथ समझौता करते हैं, और इस प्रकार उस दिन को नज़दीक लाने में,

जब कि विभिन्न राष्ट्रों में युद्धों का होना असम्भव हो जायगा, वे शोर मचानेवाले और मौखिक सहानुभूति प्रकट करनेवाले परोपकारी सुधारकों की अपेक्षा बहुत अधिक काम कर दिखाते हैं। इस बात का पता रखने के लिये कि हमारे दूसरे भाई क्या कर रहे हैं, उनके साथ अपना परिचय बढ़ाने के लिये, अपने विचारों की वृद्धि और प्रचार के लिये, वे मज़दूरों के अखबार निकालते हैं, और उसके लिये उनको न जाने कितनी कोशिशें करनी पड़ती हैं।

यह कैसा कभी न रुकनेवाला संग्राम है! कितनी ही बार थक जाने, प्रतिज्ञा भ्रष्ट हो जाने, अत्याचार का शिकार बन जाने के कारण कार्यकर्तागण कार्यक्षेत्र से हट जाते हैं और उनकी जगह नये कार्यकर्ताओं का प्रबन्ध करना पड़ता है। कभी तोपों और बन्दूकों की गोले-गोलियों से नेताओं का खातमा हो जाता है और तमाम संगठन नये सिरे से करना पड़ता है। कभी भीषण हत्याकाण्ड के फल से सारा काम ही चौपट हो जाता है और फिर नये ढंग से आन्दोलन शुरू किया जाता है। इन सब कारणों से काम को बार-बार प्रारम्भ करने में न जाने कितनी अपरिमित शक्ति व्यय होती रहती है।

श्रमजीवियों के अखबार उन लोगों द्वारा संचालित किये जाते हैं, जिन्होंने अपने को आहार और निद्रा से वंचित

करके थोड़ा-बहुत ज्ञान जबर्दस्ती प्राप्त कर लिया है। उनके आन्दोलन का आधार ग़रीब मज़दूरों से पैसा-पैसा करके इकट्ठा किया हुआ धन है, जिसे वे जीवन की सबसे बड़ी आवश्यकताओं को त्याग कर और प्रायः सूखी रोट पर बसर करके बचाते हैं। इन सब कामों को करने के साथ-साथ उनको सदा इस बात का भय बना रहता है कि जब कभी उनके मालिकों को इस बात का पता लग जायगा कि उसका मज़दूर—उसका गुलाम—साम्यवादी हो गया है, उसी दिन से उनके कुटुम्ब को भूखों मरना पड़ेगा।

ये बातें हैं, जो तुमको दिखलाई पड़ेंगी, अगर तुम जन-समूह के भीतर जाओ। इस कभी खतम न होनेवाले संग्राम में ग़रीब मज़दूर कठिनाइयों के बोझ के नीचे पिसता हुआ इस प्रकार के उद्गार प्रकट करने लगता है :—

"कहाँ हैं वे नवयुवक, जो कि हमारे पैसे से शिक्षित बने थे? जिनके लिये हमने, जब वे अध्ययन कर रहे थे, वस्त्र और भोजन पहुँचाया था! जिनके लिये हमने अपनी झुकी हुई पीठ पर भारी बोझ उठाकर और खाली पेट रह कर इन मकानों को, इन विद्यालयों को, इन अजायब-घरों को तैयार किया था! जिनके लिये अपना खून सुखाकर इन बढ़िया किताबों को छापा, जिनको हम पढ़ तक नहीं सकते! कहाँ हैं वे प्रोफेसर, जो कि मनुष्य-समाज के

विज्ञान को जानने का दावा करते हैं, पर जिनकी निगाह में एक दुष्प्राप्य कीड़े का मूल्य मनुष्य से बढ़कर है! कहाँ हैं वे व्यक्ति, जो स्वाधीनता का प्रचार करते फिरते हैं, पर जो कभी हमारे जैसे प्रति दिन पैरों के तले कुचले जानेवाले लोगों की सहायता को खड़े नहीं होते! ये लेखक, ये कवि, ये चित्रकार—सब ढोंगी हैं, ये वैसे तो आँखों में आँसू भरकर सर्वसाधारण की दुर्दशा का वर्णन करते फिरते हैं, पर इतने पर भी कभी हम लोगों के पास आकर हमारे काम में मदद नहीं करते!"

इन शिक्षित कहलानेवालों में से कुछ लोग कायरता-पूर्ण उदासीनता का भाव रखकर सन्तोषपूर्वक सुख भोगते रहते हैं, और शेष बहुसंख्यक लोग इन श्रमजीवियों को 'हुल्लड़बाज़' कहकर नफ़रत करते हैं, और अगर कभी वे उनके विशेष अधिकारों पर हमला करना चाहें, तो उनपर झपटने को सदा तैयार रहते हैं।

महत्वाकांक्षी नेता

यह सच है कि समय-समय पर कोई नवयुवक सामने आता है, जो कि फ़ौजी बाजों और मोरचों का स्वप्न देखता है, और जो सनसनी फैलानेवाले दृश्यों और घटनाओं की तलाश में रहता है। पर जैसे ही वह देखता है कि मोरचों की तरफ़ जानेवाली सड़क बहुत लम्बी है, और रास्ते में वह

जिन फूलों की आशा करता है, उनके साथ तेज काँटे भी मिले हैं, उसी समय वह जनता के हित की तरफ से पीठ फेर लेता है। बहुत करके ऐसे लोग महत्वाकांक्षी और आवारे आदमी होते हैं, जो कि अपनी पहली कोशिशों में असफल होकर जनसमूह की सहानुभूति प्राप्त करना चाहते हैं। पर अगर कभी जनसमूह उन सिद्धान्तों को अमल में लाने की कोशिश करता है, जिनका ये लोग स्वयं प्रचार करते हैं, तो ये उसके कट्टर विरोधी बन जाते हैं। और अगर कभी श्रमजीवी इनकी आज्ञा के बिना आगे बढ़ने को चेष्टा करें, तो ये नेता महाशय शायद उनको तोपों का निशाना बनाने में भी संकोच न करें।

इतना ही नहीं, कितने ही आदमी अपनी मूर्खता के कारण जनसमूह का अपमान करते हैं, बड़ा अभिमान तथा ग़रूर दिखलाते हैं, और लोगों की बदनामी करके अपनी कायरता का परिचय देते हैं। जनता के विकास के शक्तिशाली आन्दोलन में मध्यम श्रेणी के शिक्षित नवयुवक ऐसी ही 'सहायता' पहुँचाते हैं!

इस पर भी तुम पूछते हो कि 'हम क्या करें?' क्या तुम नहीं देख सकते कि अभी सारा काम करने को पड़ा है? जनसमूह ने जो महत्वपूर्ण कार्य उठाया है, वह इतना विशाल है कि उसमें हजारों लाखों नवयुवकों को

अपनी तरुणावस्था की समस्त शक्ति, अपनी बुद्धिमत्ता और अपनी योग्यता को काम में लगाकर सर्वसाधारण की सहायता करने का चाहे जितना मौक़ा मिल सकता है।

नया मार्ग

तो फिर क्या करें? सुनो।

अगर तुम विज्ञान के प्रेमी हो, अगर तुम साम्यवाद के सिद्धान्तों को अच्छी तरह ग्रहण कर चुके हो, अगर तुम क्रान्ति के असली अर्थ को समझ चुके हो, जो कि इस समय भी हमारा दर्वाजा खटखटा रही है; तो क्या तुम इस बात को नहीं समझ सकते कि विज्ञान को नये सिद्धान्तों के अनुकूल बनाने के लिये उसकी हरएक शाखा का पुनः संस्कार किया जाना आवश्यक है? तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम इस क्षेत्र में इतनी बड़ी क्रान्ति उत्पन्न कर दो, जितनी पिछले सौ वर्षों की समस्त वैज्ञानिक उन्नति के द्वारा भी नहीं हुई है। क्या तुम नहीं जानते कि आजकल के ऐतिहासिक ग्रन्थ नानी की कहानी की तरह हैं, और उनमें सिवाय बड़े-बड़े बादशाहों, बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों और बड़ी-बड़ी राजसभाओं या पार्लामेन्टों के क़िस्सों के और कुछ भी नहीं है? अब इतिहास भी नये सिरे से लिखा जाना चाहिये, जिसमें बतलाया जाय कि मनुष्य जाति के विकास में साधारण जनता की क्या स्थिति रही। इसी प्रकार अर्थशास्त्र, जो आजकल

मालदार लोगों के लूट के धन को पवित्र सिद्ध करने का साधन-मात्र वना हुआ है, फिर से तैयार किया जाना चाहिये। उसके मूल सिद्धान्तों और असंख्य प्रयोगों का आधुनिक रीति से निर्णय करना चाहिये। इसी प्रकार मानव-शास्त्र, सामाज-शास्त्र, नीति-शास्त्र में पूरी तरह से परिवर्तन करना चाहिए, और प्राकृतिक-विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में भी आधुनिक विचारों के अनुसार पूर्ण-सुधार किया जाना आवश्यक है।

वहुत अच्छा, अब तुम कार्य आरम्भ करो! अपनी योग्यता को महान उद्देश्य की पूर्ति में लगाओ। खासकर अपनी प्रखर तर्क-शक्ति से हमारे अन्ध-विश्वासों को दूर करने में, तथा अपनी संयोगात्मक योग्यता से हमारे उत्कृष्ट सङ्गठन की नींव क़ायम करने में हमारी सहायता करो। इतना ही नहीं, हमको हमारे नित्य प्रति के विवाद में निर्भयता की उस भावना से काम लेना सिखलाओ, जो कि वैज्ञानिक गवेषणा का मुख्य लक्षण है। और जिस प्रकार प्राचीनकाल के वैज्ञानिक अपने जीवन के उदारहण से दिखला गये हैं उसी प्रकार तुम भी हमको दिखलाओ कि मनुष्य किस तरह सत्य की रक्षा के लिये अपने प्राण तक दे सकता है।

अगर तुम डाक्टर हो और तुमने कटु अनुभव से साम्य-

वाद की सचाई को जान लिया है तो तुम्हारा कर्तव्य है कि निरन्तर हमको बतलाते रहो, कि अगर मनुष्यों के रहन-सहन और मजदूरी की वर्तमान दशा क़ायम रही, तो मनुष्य-समाज तेज़ी के साथ पतन की तरफ़ अग्रसर होता जायगा। तुम जनता को समझाओ कि जब तक मनुष्यों की उत्पत्ति और वृद्धि ऐसी परिस्थिति में होती रहेगी, जो कि स्वास्थ्य-रक्षा के वैज्ञानिक नियमों के सर्वथा प्रतिकूल है, तब तक डाक्टरों की सब दवाएँ रोगों के मिटा सकने में असमर्थ रहेंगी। लोगों को विश्वास दिलाओ कि यही रोगों का असली कारण है, और आवश्यकता है कि इसको जड़ से उखाड़ कर फेंक दिया जाय। साथ ही लोगों को यह भी बतलाओ कि इन कारणों को कैसे मिटाया जा सकता है।

अपने चाकू को लेकर आओ और जँचे हुए हाथ से हमारे इस समाज में नश्तर लगाओ, जो कि बड़ी तेज़ी से गलती-सड़ती जा रही है। लोगों को बतलाओ कि बुद्धि-मानी पूर्वक जीवन-व्यतीत करने का मार्ग क्या है, और वह कैसे प्राप्त हो सकता है? एक सच्चे चिकित्सक की भाँति इस बात पर जोर दो कि निर्जीव अङ्ग को काट डालना आवश्यक है, नहीं तो वह तमाम देह में विष पैदा कर देगा।

अगर तुमने यंत्रविद्या और आधुनिक शिल्पकला का अभ्यास किया है, तो यहाँ आकर हमको बतलाओ कि

तुम्हारे आविष्कारों का क्या नतीजा निकला। अभी तक जो जो लोग भविष्य के कार्यक्रम पर चलने का साहस नहीं करते उनको विश्वास दिलाओ कि इस समय तक मनुष्य-जाति जितना ज्ञान प्राप्त कर चुकी है, उसी ज्ञान से बड़े-बड़े आविष्कार किये जा सकते हैं उनको समझाओ कि अगर कल-कारखानों का सङ्गठन सुधार दिया जाय, तो आश्चर्य-जनक फल प्राप्त हो सकता है अगर सब लोग सदा मनुष्य-जाति के हित का ख्याल रखकर चीजें उत्पन्न करें तो पैदावार कई गुनी ज्यादा बढ़ सकती है।

अगर तुम कवि, चित्रकार, मूर्तिकार, या सङ्गीतज्ञ हो, और तुम अपने सच्चे कर्तव्य को पहिचानते हो, अपनी कला के वास्तविक हित को समझते हो, तो हमारे पास आओ। अपनी क़लम, अपनी पेंसिल, अपनी छेनी, और अपने विचारों को क्रांति की सेवा में लगाओ। अपनी उत्साह-जनक रचना या भावपूर्ण चित्रों द्वारा उस वीरतापूर्ण संग्राम का दिग्दर्शन कराओ, जिसमें जनसमूह अत्याचारियों के विरुद्ध लड़ रहा है नवयुवकों के हृदय में उस श्रेष्ठ क्राँतिकारी उत्साह की आग भर दो, जिससे हमारे पूर्वजों की आत्माएँ उत्तेजित हुआ करती थीं। स्त्रियों को समझाओ कि जो पति अपना जीवन मनुष्य-जाति के उद्धार के महान-कार्य में उत्सर्ग कर देता है उसका जीवन धन्य है। लोगों को इस

बात को समझाओ कि उनका वर्तमान जीवन कैसा वीभत्स बन गया है और इस बुराई के कारणों को भी उनको बतलाओ। जनता को समझाओ कि हमारा जीवन कहीं अधिक उत्तम बन सकता है, अगर हमारे मार्ग में से वे बाधाएँ दूर हो जायँ जो कि समाज की मूर्खतापूर्ण और शर्मनाक प्रथाओं की वजह से पैदा होती हैं।

अन्त में तुम सब लोग, जिनके पास ज्ञान, भाषणशक्ति, योग्यता तथा परिश्रम के गुण हैं, अगर तुम्हारे भीतर सहानुभूति का एक भी कण है, तो स्वयं आओ और अपने मित्रों को भी लाओ; और उन लोगों की सेवा करो जिनको उसकी सबसे अधिक आवश्यकता है। पर इतना अवश्य याद रखो कि अगर तुम आते हो, तो मालिक बनकर नहीं आते, वरन् एक साथी की, एक सखा की, एक दोस्ती की हैसियत से आते हो। तुम हुकूमत करने के लिये नहीं आते, वरन् एक नये जीवन में प्रवेश करके स्वयं शक्ति प्राप्त करने के लिए आते हो इससे भविष्य में तुम उन्नति कर सकोगे और विजय प्राप्त कर सकोगे तुम्हारा काम केवल लोगों को उपदेश देने का नहीं है, वरन् तुम्हारा मुख्य कर्तव्य है उनकी आकांक्षाओं को समझकर उनको उचित रूप देने का, और तब उन्हें कार्य रूप में परिणत करने का। यह कार्य तुमको विना किसी तरह

के आराम या जल्दबाजी के अपनी तरुण-अवस्था के समस्त उत्साह और जीवन भर के अनुभव को लगाकर पूर्ण करना होगा। केवल ऐसा करने से ही तुम सर्वाङ्गपूर्ण, श्रेष्ठ और विवेक के अनुकूल जीवन व्यतीत कर सकते हो तब तुम देखोगे कि इस मार्ग में किये गये तुम्हारे सब प्रयत्न पूरी तरह से फलीभूत हो रहे हैं। और जब एक बार तुम्हारे कर्म और तुम्हारी अन्तरात्मा में इस प्रकार की उच्च श्रेणी की एकता पैदा हो जायगी तो इससे तुमको ऐसी शक्तियाँ प्राप्त होंगी, जिनकी तुम कभी कल्पना भी न कर सके होगे और जो अभी तक तुम्हारे भीतर सोई हुई पड़ी हैं।

इस प्रकार तुम जनसमूह के साथ रहते हुए सत्य-न्याय और समानता के लिये कभी न रुकनेवाला संग्राम कर सकोगे और उसके द्वारा सर्वसाधारण को अपना अहसान-मन्द बना सकोगे। किसी भी जाति के नवयुवक इससे बढ़-कर और किस श्रेष्ठ जीवन की आकांक्षा कर सकते हैं?

इतनी देर बाद मैं धनवान और ऊँची श्रेणीवालों को यह समझा सका कि तुम्हारे जीवन में जो दुबिधा पैदा होती है, उससे छूटने के लिये तुमको लाचार होकर—अगर तुम साहसी और सत्य के प्रेमी हो तो—साम्यवादियों के पास आना होगा, उनके साथ रहकर काम करना पड़ेगा। और उनमें दलभुक्त होकर सामाजिक क्रान्ति की सफलता के

लिये उद्योग करना पड़ेगा। अब मालूम होता है कि यह सिद्धांत कैसा स्वाभाविक और सहज में समझे जाने लायक है। पर जब हम एक ऐसे आदमी को समझना चाहें, जिस पर धनवानों के पक्षपातियों की बातों और कामों का पूरा प्रभाव पड़ चुका है, तो यह आवश्यक है कि कितने ही मिथ्या तर्कों का खण्डन किया जाय, कितने ही पक्षपात-जनित भावों को मिटाया जाय, और कितने ही स्वार्थयुक्त ऐतराजों को दूर किया जाय।

ग़रीब-श्रेणी वाले

अब हम ग़रीब-श्रेणी के नवयुवकों से कुछ कहना चाहते हैं। पर आजकल इसके लिये, बहुत विस्तार-पूर्वक समझाने की ज़रूरत नहीं। क्योंकि चाहे तुममें बुद्धि और साहस की मात्रा बहुत कम हो, पर घटनाओं के दबाव में पड़कर तुमको खुद ही साम्यवादी बनने को लाचार होना पड़ेगा।

जो व्यक्ति श्रमजीवी या ग़रीब-श्रेणी में उत्पन्न होकर अपनी शक्ति साम्यवाद की विजय के लिये खर्च नहीं करता, वह यह भी नहीं समझता कि स्वयं मेरा हित किस बात में है साथ ही वह अपने कर्तव्य और उत्तरदायित्व से भी विमुख रहता है।

क्या तुमको वह समय याद है, जब कि तुम बिलकुल

बच्चे थे और जाड़े के मौसम में एक दिन अपने छोटे से आँगन में खेल रहे थे? उस समय तुम्हारे पतले कपड़ों के भीतर घुसकर ठंड तुमको काट रही थी और तुम्हारे फटे जूतों के भीतर मिट्टी भरी जाती थी। उस समय तुमने कुछ मोटे-ताजे लड़कों को खूब बढ़िया कपड़े पहिनकर जाते देखा और यह भी देखा कि वे तुम्हारी तरफ़ उपेक्षा के भाव से देखते जाते हैं। उस दशा में भी तुम अच्छी तरह जानते थे कि चाहे ये छोकरे बढ़िया से बढ़िया कपड़े पहिन रहे हैं, पर बुद्धिमानी में, समझदारी में और काम करने की शक्ति में वे तुम्हारे या तुम्हारे साथियों के बराबर नहीं हैं। पर उसके बाद तुमको लाचारी से गन्दे कारखाने में बंद रह कर सुबह पाँच-छै बजे से शाम तक बारह घण्टे मशीन पर काम करना पड़ा, उसके साथ तुमको भी मशीन बन जाना पड़ा और वर्षों तक प्रति दिन मशीन की अविराम गति और कर्कश स्वर के सहयोग में रहकर बुरी तरह पिसना पड़ा। इस बीच में वे मोटे-ताजे लड़के बिना किसी तरह की चिन्ता-फिकर के स्कूलों, कालेजों और विद्यालयों में शिक्षा पाते रहे। और वे ही लड़के जो तुमसे बुद्धि में हीन हैं, पर जिनको अच्छी तरह से शिक्षा मिली है, अब तुम्हारे स्वामी बने हुए हैं, और जीवन के सब सुखों का आनन्द के साथ उपभोग कर रहे हैं!

पर तुम्हारा आजकल क्या हाल है? तुम हर रोज़ काम से लौटकर एक छोटे से अँधेरे और सीले हुए घर में आते हो, जिसमें थोड़ी सी जगह के भीतर पाँच-छे आदमियों को जानवरों की तरह पड़ा रहना पड़ता है। उसी कोठरी में तुम्हारी माँ, जो ज़िन्दगी से बेज़ार हो चुकी है, और ज़्यादा उम्र हो जाने से नहीं, वरन् चिन्ताओं के कारण बूढ़ी हो चुकी है, तुमको सूखी रोटी, और पानी जैसी दाल खाने को देती है। तुम्हारे सामने सोचने विचारने के लिये केवल एक ही सवाल रहता है कि "मैं कल दुक़ानदार को आटे का दाम कहाँ से दूँगा और परसों मकानवाले का भाड़ा कहाँ से चुकाया जायगा?"

क्या तुम इसी प्रकार का दुःख-पूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहते हो जैसा तुम्हारे माता-पिता तीस चालीस वर्ष तक भोग चुके हैं। क्या तुम दूसरे लोगों के लिये शरीर, ज्ञान और कला-कौशल सम्बन्धी सब प्रकार के सुख पहुँचाने के वास्ते इसी प्रकार तमाम उम्र परिश्रम करते रहोगे। और तुम स्वयं अनन्तकाल तक इसी चिन्ता में फँसे रहोगे कि कल खाने के लिये रोटी मिलेगी या नहीं? क्या थोड़े से आलसियों को सब प्रकार का ऐश-आराम का सामान मिलता रहे, इसलिये तुम स्वयं सदा के लिये उन वस्तुओं से वंचित रहोगे, जिनसे जीवन का आनन्द प्राप्त होता है?

क्या तुम परिश्रम द्वारा अपने को शक्तिहीन बना लोगे और उसके बदले में, जब कि कठिनाई का समय आवे, दुःख भोगना स्वीकार करोगे ? क्या तुम इसी तरह की जिन्दगी बसर करना चाहते हो ?

शायद तुम इसके लिये भी राज़ी हो जाओ ! तुमको जैसी दशा में रहना पड़ता है, उससे बाहर निकलने का कोई मार्ग न देखकर शायद तुम कहने लगो कि—"सारी दुनियाँ इसी प्रकार-की दुर्दशा में फँसी हुई है और जब मैं इस दशा में कुछ परिवर्तन नहीं कर सकता, तो मुझे भी इसे बरदाश्त करना चाहिये। ऐसी दशा में यही उचित है कि हम परिश्रम करते रहें और जिस प्रकार बन सके ज़िन्दा रहने की कोशिश करें।"

बहुत अच्छा ! अगर तुम्हारा ऐसा ही विचार है तो किसी दिन जीवन की घटनायें स्वयं तुम्हारी आँखें खोल देंगी।

एक दिन किसी तरह का व्यापार-संकट (व्यवसाय-सम्बन्धी हलचल) आता है—उस तरह का व्यापार-संकट नहीं, जैसे, पहले ज़माने में आते रहते थे और जो थोड़े बहुत दिनों में ख़तम हो जाते थे। वरन् एक ऐसा व्यापार-संकट उपस्थित होता है, जो किसी ख़ास व्यापार, कारीगरी को पूरी तरह से नष्ट कर डालता है, जो हज़ारों मजदूरों

को दुर्दशा में फँसा देता है, जो पूरे कुटुम्बों का नामो निशान मिटा देता है। तुम भी दूसरे लोगों की तरह इस आफ़त से बचने के लिये हाथ पैर मारते हो। पर शीघ्र ही तुम देखोगे कि किस प्रकार तुम्हारी स्त्री, तुम्हारे बच्चे, तुम्हारे नाते-रिश्तेदार धीरे-धीरे भूख की ज्वाला से पीड़ित होते हैं और तुम्हारी आँखों के सामने ही काल का ग्रास बन जाते हैं। सिर्फ़ भोजन के अभाव से, खबरदारी और दवादारू की कमी के कारण वे अपना जीवन एक टूटी चारपाई पर समाप्त कर देते हैं। पर उस समय भी मालदार लोग बड़े-बड़े शहरों की सुन्दर सड़कों पर सजे हुए महलों के भीतर जिन्दगी के मजे उड़ाते रहते हैं, और उन भूखे रहनेवालों और मरनेवालों का कभी भूलकर भी ख़याल नहीं करते। तब तुम समझोगे कि वर्तमान समाज कैसा घृणित बन गया है। तब तुम व्यापार-संकट के कारणों पर विचार करने लगोगे, और अपनी जाँच-पड़ताल के द्वारा तुम इस निन्दनीय-प्रथा का भेद पूरी तरह से समझ जाओगे, जिसके कारण लाखों मनुष्यों को थोड़े से निकम्मे और तुच्छ लोगों के लालच का शिकार बनना पड़ता है और उनकी कृपा पर आधार रखना पड़ता है। तब तुम समझोगे कि साम्यवादियों का यह कहना बिल्कुल सच है कि वर्तमान मनुष्य-समाज का अवश्य ही सिर से पैर तक

फिर से संगठन किया जाना चाहिये, और ऐसा संगठन भी किया जा सकता है।

अब हम इस सार्वजनिक व्यापार-संकट की बात को छोड़कर तुम्हारी व्यक्तिगत मिसाल पर विचार करते हैं। एक दिन तुम्हारा मालिक तुम्हारी मजदूरी और भी घटाने की कोशिश करता है, जिससे तुम्हारे जरिये वह दो-चार आने ज्यादा कमा सके और अपने धन-भण्डार को और ज्यादा बढ़ा सके। तुम इस अन्याय का विरोध करोगे, पर वह घमण्ड के साथ जवाब देगा—"निकल जाओ, और घास खाओ, अगर तुम इतनी मजदूरी पर काम नहीं करना चाहते !" तब तुम समझोगे कि तुम्हारा मालिक तुमको केवल भेड़ की तरह मूँड़ना ही नहीं चाहता, वरन् वह सच-मुच तुमको एक नीचे दर्जे का जानवर ही समझता है। वह तुमको नौकरी के जरिये अपने निर्दय-पञ्जे में रखने से ही सन्तुष्ट नहीं है, वरन् वह चाहता है कि तुमको पूरी तरह से अपना गुलाम बनाकर रखे। उस वक्त या तो तुम उसके सामने सर झुका दोगे, तुम मनुष्यत्व के गौरव के भाव को तिलाञ्जलि दे दोगे, और हर तरह के बड़े-से-बड़े अपमान को सहते हुए तुम्हारा जीवन समाप्त होगा। अथवा तुम्हारा खून गर्म हो उठेगा, तुम अपने भीषण पतन को देखकर काँप उठोगे, और तुम उस अभिमानी को जैसे का

तैसा जवाब सुना दोगे? तब तुमको नौकरी से अलग होकर रास्ते में मारा-मारा फिरना पड़ेगा, और तुम समझ जाओगे कि साम्यवादियों का यह कहना कितना ठीक है कि—"उठ खड़े हो और आर्थिक-गुलामी के खिलाफ़ विद्रोह का झण्डा ऊँचा करो।" तब तुम साम्यवादियों के पास आओगे और उनके दल में स्थान ग्रहण करके इस बात का उद्योग करोगे, जिससे आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक—सब प्रकार की गुलामी पूरी तरह से नष्ट हो जाय।

स्त्रियाँ

किसी दिन तुम उस मनोहारिणी युवती का किस्सा सुनोगे, जिसकी सुन्दर चाल, निष्कपट बर्ताव तथा मीठी बोलचाल को देखकर तुम्हारा हृदय प्रसन्न हुआ करता था। वह वर्षों तक अपनी दशा सुधारने के लिये हर तरह का प्रयत्न करती रही, पर अन्त में निरुपाय होकर वह किसी बड़े शहर में चली आई। वह जानती थी कि ऐसी जगह में गुजारा कर सकना बड़ा कठिन होता है, तो भी उसे उम्मीद थी कि मेहनत-मजूरी करके कम-से-कम वह अपना पेट पालन कर सकेगी। पर क्या तुम जानते हो कि उसका क्या परिणाम हुआ? किसी मालदार नौजवान ने उसे मीठी-मीठी बातों से फुसला लिया और उसने अपना सर्वस्व उस युवक को अर्पण कर दिया। पर थोड़े ही दिन बाद

वह दूध की मक्खी की भाँति निकाल कर फेंक दी गई और उसके सर पर एक बच्चे का बोझ भी आ पड़ा! वह बड़ी हिम्मतवाली स्त्री थी, और वह बराबर बाधाओं का मुक़ाबला करती रही। पर अन्त में भूख और ठंड की मार को न सह सकने से उसका स्वास्थ्य भंग हो गया और एक खैराती अस्पताल में उसने अपनी जीवन-लीला समाप्त की।

ग़रीब श्रेणी की बहिनो! क्या ऐसी घटनाओं को देखकर तुम शान्त बनी रहोगी और इसका कोई प्रतिकार न करोगी? जब तुम अपने बच्चे को दूध पिलाती हो और उसके छोटे से सर पर हाथ फेर-फेर कर प्यार करती हो, तब क्या तुम कभी इस बात का भी ख़याल करती हो कि अगर समाज की वर्तमान दशा में परिवर्तन न हुआ, तो बड़ा होने पर उसको कैसे दुःख भोगने होंगे? क्या तुम कभी इस बात पर ग़ौर नहीं करतीं कि तुम्हारी छोटी बहिनों और तुम्हारी संतान को भविष्य में क्या-क्या सहन करना पड़ेगा? क्या तुम चाहती हो कि तुम्हारे लड़के भी उसी प्रकार घास-पात की तरह पैदा होकर नष्ट हो जायँ, जैसे कि तुम्हारे बाप नष्ट हो चुके हैं? उनको सदा इसी बात की चिन्ता बनी रहे कि कल रोटी कहाँ से मिलेगी? उनके दिल-बहलाव के लिये सिवाय ताड़ी की दुकान के और कोई स्थान न हो? क्या तुम चाहती हो कि तुम्हारे पति और

तुम्हारे पुत्र सदा के लिये किसी भी ऐसे व्यक्ति की कृपा के भिखारी बने रहें, जिसे उत्तराधिकार में अपने बाप की सम्पत्ति मिल जाय, और जो उनको नौकर रखकर लाभ उठा सके? क्या तुम यही पसंद करती हो कि वे किसी बड़े आदमी के गुलाम बने रहें, बंदूकों के शिकार होते रहें, और दूसरों का माल हड़प करनेवाले धनवानों की लाभ की खेती में सदा खाद की तरह अपने हाड़-मांस को गलाते रहें?

नहीं, कभी नहीं, हजार बार नहीं! मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि तुम्हारा खून खौलने लगता है, जब तुम देखती हो कि तुम्हारे पति बड़ी उत्तेजना और दृढ़-प्रतिज्ञा के साथ हड़ताल आरम्भ करके, अन्त में हाथ जोड़कर अभिमान से फूले हुए मालिक की अत्यन्त अपमानपूर्ण शर्तों को मंजूर कर रहे हैं। मैं समझता हूँ कि तुम उन वीर क्षत्राणियों को आदर्श मानती हो, जिन्होंने स्वाधीनता की रक्षा के लिये घोर संग्राम में अपने सिर कटाये हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि जब तुम विदेशों की उन स्त्रियों का वर्णन पढ़ती हो, जिन्होंने राज्य-क्रांति के समय गोले-गोलियों की झड़ी में खड़ी रहकर अपने घरवालों को उनके वीरतापूर्ण कार्य के लिये उत्साहित किया था, तो तुम्हारा दिल उत्साह से उछलने लगता है।

हमारा कर्तव्य

इसलिये गरीब श्रेणी के नौजवानो ! पुरुषो और स्त्रियो ! किसानो और मजदूरो ! कारीगरो और सिपाहियो ! तुम सब अपने अधिकारों को समझो, और हमारे साथ चलने को तैयार हो ! तुम आओ और अपने भाइयों के साथ मिलकर उस महान क्रांति की तैयारी के लिये उद्योग करो, जो कि गुलामी के नाम निशान को मिटा देगी, बेड़ियों के टुकड़े-टुकड़े करके फेंक देगी, पुरानी रद्दी प्रथाओं को तोड़कर बहा देगी और समस्त मनुष्य जाति के लिये एक नवीन और विस्तृत सुखी जीवन का मार्ग खोल देगी—उस क्रांति के लिये, जो कि अन्त में समस्त मनुष्य-समाज के बीच, सच्ची स्वाधीनता, वास्तविक समानता और द्वेषरहित भ्रातृ-भाव की स्थापना करेगी—उस क्रांति के लिये, जो कि सबसे काम करावेगी और सबको काम करने का अवसर देगी; जिसके द्वारा मनुष्य अपने परिश्रम का फल पूरी तरह आनन्द के साथ उपभोग कर सकेंगे, उनकी शक्तियों का पूर्णरूप से विकास हो सकेगा, और सबका जीवन विवेक-युक्त, मनुष्यत्व के अनुकूल और सुखी होगा।

किसी को यह कहने का मौका मत दो कि हम लोग संख्या में बहुत थोड़े हैं, और इसलिये उस महान-कार्य को सिद्ध करने के लिये, जो कि हमारा लक्ष्य है, बहुत कमजोर हैं।

गिनती करके देखो कि जो लोग इन अत्याचारों को सह रहे हैं, वे कितने अधिक हैं।

हम किसान, जो कि दूसरों के लिये मेहनत करते हैं, और जो कि धनवानों को गेहूँ खिलाकर खुद छिलका खाते हैं, हमलोग गिनती में करोड़ों हैं।

हम मजदूर और जुलाहे, जो कि रेशम और मखमल बुनते हैं, पर खुद चिथड़े लपेट कर रहते हैं, हम भी बहुत बड़ी संख्या में हैं। जब कारखानों की छुट्टी की सीटी बजती है, तो हम बड़े-बड़े शहरों की सड़कों और चौकों को समुद्र की लहरों की तरह भर देते हैं।

हम सिपाही, जो कि अफ़सरों के हुक्म या डंडों के द्वारा चलाये जाते हैं; जो कि गोलियों को अपने ऊपर लेते हैं, पर उसके बदले में हमारे अफ़सरों को मेडल और पेन्शन मिलती है; जिनको अपने ही भाइयों के ऊपर गोली चलाने के सिवाय और कोई अच्छा काम नहीं आता—हम भी इतनी बड़ी तादाद में हैं कि जिस दिन हम इन मोटे-ताजे और सजे हुए अफ़सरों के सामने सिर ऊँचा करके खड़े हो जायँगे, जो कि हम पर बड़ी शान के साथ हुकुम चलाते रहते हैं—तो उनके चेहरे बिलकुल पीले पड़ जायँगे।

सचमुच हम सब लोग जो कि हर रोज़ अन्याय सहते

हैं और अपमानित किये जाते हैं, मिलकर इतनी बड़ी संख्या में हैं जिसकी कोई शुमार नहीं। हम उस महासमुद्र के समान हैं, जो सबको अपने में मिला लेता है—सबको निगल जाता है।

जिस दिन हम उपर्युक्त बातों के करने का दृढ़ निश्चय कर लेंगे, उसी क्षण न्याय स्थापित हो जायगा, और उसी समय संसार के अत्याचारी धूल में मिल जायँगे।

अपराधी कौन है

[यह लेख अमरीका के एक प्रसिद्ध साम्यवादी वकील के भाषण के आधार पर लिखा गया है, जो कि एक जेलखाने में कैदियों के सामने दिया गया था। इसमें तमाम उदाहरण अमरीका के ही दिये गये थे जिनको बदल कर हमने सार्वजनिक और कहीं-कहीं भारतीय कर दिया है। भाषण-कर्ता के विचार सर्वथा नये और मौलिक हैं। आशा है पाठक उनकी नवीनता से न घबड़ाकर उनपर निष्पक्षता से विचार करेंगे।]

अगर जेल, जुर्म और मुजरिमों (अपराध और अपराधियों) के सम्बन्ध में मेरे विचार उसी तरह के होते, जैसे आम तौर पर लोगों के हुआ करते हैं, तो मैं तुम्हारे सामने कभी इस विषय पर बोलने को खड़ा न होता। मैं

जुर्म, उनके कारण तथा उनको रोकने के उपायों के बारे में जो तुमसे बातचीत करने लगा हूँ, उसका कारण यही है कि वास्तव में मैं 'जुर्म' की सत्ता पर विश्वास नहीं करता। आप लोग 'जुर्म' के शब्द से जो भाव ग्रहण करते हैं, उसे मैं बिलकुल नहीं मानता। मैं हरगिज़ इस बात को मानने के लिए तैयार नहीं हूँ कि जो लोग जेलों के भीतर बन्द हैं वे उन लोगों से चरित्र या नीति में किसी प्रकार नीच हैं, जो कि जेलों के बाहर रहते हैं। ये दोनों तरह के आदमी एक समान अच्छे या बुरे हैं। जो लोग जेल के भीतर बन्द हैं, वे यहाँ आने को लाचार थे, जिस प्रकार जेल के बाहर रहनेवाले अपने स्थान पर रहने को लाचार हैं। मैं इस बात पर विश्वास नहीं करता कि जो लोग जेल में आते हैं वे उसी के लायक़ हैं। उन लोगों को केवल ऐसी परिस्थिति के वश में होकर जेल में आना पड़ता है, जिसको बदल सकना उनकी ताक़त के बाहर होता है और जिसके लिये वे किसी तरह जिम्मेदार नहीं ठहराए जा सकते।

मैं समझता हूँ कि बहुत से लोग, जो जेलों के बाहर रहते हैं, वे अगर मेरे इस भाषण को सुनें, तो वे कहेंगे कि मैं तुमको नुक़सान पहुँचा रहा हूँ। पर तुम लोग जिस हालत में हो उससे बढ़कर नुकसान तुमको शायद ही पहुँचाया जा सकता है, इसलिए इस बात के लिए डरना फ़िज़ूल है।

बाहर रहनेवाले लोग, जो 'भले आदमी' कहे जाते हैं, वे कहेंगे कि मैं तुमको जो बातें सिखला रहा हूँ वे सचमुच समाज को नुक़सान पहुँचानेवाली हैं। पर तुम लोग दूसरे उपदेशकों और प्रचारकों से हमेशा जो बातें सुना करते हो, कभी-कभी उससे भिन्न प्रकार की बातें सुनना भी आवश्यक है। ये उपदेशक तुमसे कहते हैं कि तुम नेक आदमी बन जाओ, तब तुम धनी और सुखी हो सकोगे। पर हम अच्छी तरह जानते हैं कि नेक या सज्जन बनने से कोई आदमी धनवान् नहीं बन जाता, वरन् आजकल के ज़माने में सज्जन पुरुषों को प्रायः दरिद्रता में ही जीवन बिताना पड़ता है। यही कारण है कि तुममें से बहुत से लोग दूसरे उपायों से मालदार बनने की कोशिश करते हैं। पर अन्तर इतना ही है कि तुम लोग इस उद्देश्य को सिद्ध करने की वैसी अच्छी तरकीब नहीं जानते, जैसी कि जेल से बाहर रहनेवाले बड़े लोगों को मालूम है।

बहुत से लोगों का ऐसा ख्याल होता है कि संसार में सब बातें संयोगवश या भाग्यवश हुआ करती हैं। पर सचमुच 'संयोग' या 'भाग्य' निरर्थक शब्द हैं और उनमें कुछ भी सच्चाई नहीं है। बहुत से लोग कहते हैं कि जो लोग जेलों में मौजूद हैं, उनको तो वहाँ रहना ही चाहिए, साथ ही जेल से बाहर रहनेवाले लोगों में से बहुत से ऐसे

हैं, कि उनको भी जेल में ही रखना चाहिए। पर मेरा विचार यह है कि जेलों में किसी को रखने की ज़रूरत नहीं, और जेलों का क़ायम रखना ही व्यर्थ है। जो लोग जेलों के बाहर रहते हैं उनका व्यवहार जेल जानेवालों के साथ यदि इतना लालची और सहानुभूति-रहित न होता, तो जेलों के बनाने की ज़रूरत ही न पड़ती।

मेरे कहने का मतलब यह नहीं है कि मैं जेल में आनेवाले सब लोगों को 'फ़रिश्ता' या 'देवता' समझता हूँ—मैं कभी ऐसा ख्याल नहीं रखता। तुममें सब तरह के लोग हैं, और तुम अपनी सामर्थ्य के अनुसार अच्छी-से-अच्छी और लाभदायक बात के लिए कोशिश करते हो। अगर एक निगाह से देखा जाय तो हम सब लोग एक बराबर हैं, न कोई बहुत बुरा है न कोई बहुत अच्छा। हम सब लोग अपनी परिस्थिति के अनुसार अच्छे-से-अच्छे काम के लिए कोशिश करते हैं।* जिन कामों के लिए तुम

---

* उदाहरण के लिए जानवर मारने के काम को बहुत लोग बुरा बतलाते हैं। पर जो आदमी वधिक या क़साई के घर पैदा हुआ है और जिसे इस काम के सिवाय और कुछ नहीं आता, वह उसे नहीं छोड़ सकता। क्योंकि अगर वह ऐसा करे तो उसे खाने को न मिल सके। इसलिए वधिक की परिस्थिति को देखते

जेल भेजे गए हो, उनमें से कुछ मामलों में तुम दोषी होगे, और रुपए की जरूरत होने से तुमने वह काम किया होगा। तुममें से कुछ लोग ऐसा काम इसलिए करते हैं कि उनको उसकी आदत पड़ गई है, और कुछ लोग इसलिए कि वे पैदायश से उसी के लायक़ बने हैं। तुम लोगों के लिए इस तरह का काम करना उसी प्रकार स्वाभाविक है, जैसा कि बहुत से लोगों के लिए डॉक्टरी, वकालत और दूसरे पेशे करना।

तुममें से ज्यादातर लोगों को मेरे खिलाफ़ किसी प्रकार का भाव नहीं होगा, और तुममें से ज्यादातर लोग मेरे साथ वैसा ही बर्ताव करेंगे जैसा सब लोग आम तौर पर करते हैं। ऐसी दशा में, जब कि तुमको मेरे खिलाफ़ किसी भी तरह की शिकायत नहीं है, तुम मेरा जेब काट कर रुपया चुरा सकते हो। मुझसे किसी प्रकार का द्वेष न रखते हुए भी तुम ऐसा करते हो, इसका कारण यही है कि यह तुम्हारा पेशा है। अगर मैं अपने दरवाजे को खुला छोड़ दूँ तो तुममें से कुछ लोग मेरे घर के भीतर घुसकर माल चुरा लाएँगे। तुम यह काम इसलिए नहीं करोगे कि तुम

हुए जानवर मारने के लिए वधिक को बुरा आदमी नहीं बतलाया जा सकता।

मुझे अपना शत्रु समझते हो, वरन् इसलिए कि तुम्हारा यही रोजगार है ! तुममें से कुछ लोग ऐसे भी होंगे, जो कि और किसी उपाय से रुपया न मिलने पर राह चलते आदमी को पिस्तौल से धमका कर लूट लेते हैं। पर इस तरह के काम केवल तुम्हीं लोग नहीं करते। जब मैं बाहर रहता हूँ तो प्रायः हर एक आदमी मेरी जेब काटता है और मुझे लूटता रहता है। जब मैं अपने घर या दफ्तर में रोशनी के लिए बिजली जलाता हूँ, तो बिजली की कम्पनी मुझे लूटती है। वे लोग मुझसे चार आने की बिजली के लिए एक रुपया वसूल करते हैं। पर तो भी ये सब लोग भले आदमी समझे जाते हैं, वे समाज के स्तम्भ माने जाते हैं, वे धर्म के रक्षक कहलाते हैं, और सब कोई उनका आदर करते हैं।

जब मैं ट्राम गाड़ी पर चढ़ता हूँ तब भी मैं लूटा जाता हूँ। जितनी दूर जाने में एक आने खर्च होता है उतनी दूर के लिए मुझसे दो आने लिए जाते हैं। कारण यही है कि कुछ खास लोगों ने रिशवत देकर म्युनिसिपैलटी और शासन-सभा को अपने पक्ष में कर लिया है और वे बाक़ी सब लोगों से कर वसूल करते हैं।

अगर मैं बिजली की कम्पनी के फन्दे से बचना चाहूँ और बिजली की रोशनी के बजाय मिट्टी के तेल का लैम्प

जलाऊँ, तो मि० रॉकफ़ेलर ※ मुझे लूटते हैं। वे ही मि० रॉकफ़ेलर अपनी आमदनी का कुछ हिस्सा गिर्जाघर और विश्वविद्यालय (यूनीवर्सिटी) बनाने में लगाते हैं, जिनमें लोगों को 'ईमानदार' बनने का उपदेश दिया जाता है।

तुममें से कुछ लोग जालसाज़ी करके दूसरों से रुपया लेने के मामले में जेल भेजे गए होंगे। पर मैं हर रोज़ अख़बारों में किसी बड़े व्यापारी का विज्ञापन देखा करता हूँ कि—

"दाम घटा दिया! दस रुपए की घड़ी ३) रु० में!" क्या यह जालसाज़ी नहीं है? पर इन जालसाज़ों को कोई जेलखाने नहीं भेजता। जब मैं अख़बारों में विज्ञापनों को पढ़ता हूँ, तो मुझे यही मालूम होता है कि वे लोगों को धोखे में डालते हैं।

जब मैं बाहर जाता हूँ और दुनिया भर में किसी जगह खड़े रहने के लिए ज़रा सी जगह तलाश करता हूँ, तो मालूम होता है कि तमाम ज़मीन पर मेरे या तुम्हारे पैदा

※ मि० रॉकफ़ेलर अमेरिका के रहनेवाले हैं और दुनिया में मिट्टी के तेल के सबसे बड़े व्यापारी हैं। उनकी आमदनी तीस-चालीस करोड़ रुपए सालाना बतलाई जाती है।

होने से बहुत पहले ही क़ब्ज़ा कर लिया गया है। मैं जहाँ कहीं खड़ा होता हूँ वहीं कोई आकर कहता है—"यहाँ से दूर हो! चाहे समुद्र में तैरो; चाहे हवा में उड़ो, पर इस ज़मीन से दूर हो!" इसीलिए ये लोग पुलिस रखते हैं, जेलें बनाते हैं, जज, वकील, सिपाही वग़ैरह नियत करते हैं, जिससे ये सब ज़मीन की रखवाली करते रहें, और हरएक आदमी को, जो उनके मार्ग में बाधक हो, हटाते रहें।

बहुत से लोग इन बातों को सच बतलाएँगे, पर वे कहेंगे कि इन बातों से जेल में आनेवालों का जुर्म नहीं घट सकता। यह सच है कि बिजली की कम्पनी हर साल शासन-सभा के मेम्बरों को रिशवत देती है, अपने मन के माफ़िक़ क़ानून तैयार कराती है, और सब लोगों को, जिनका उससे काम पड़ता है, अच्छी तरह से मूँड़ती है। यह भी सच है कि ट्राम और रेलवे-कम्पनीवालों ने सड़कों और रास्तों पर क़ब्ज़ा जमा रक्खा है। इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि कुछ बड़े लोग तमाम ज़मीन के मालिक बने हुए हैं। पर इन बातों से उस आदमी का जुर्म नहीं मिट सकता, जो राह चलते निर्दोष आदमी की जेब से दस रुपए का नोट चुरा लेता है।

ऐसी दशा में हमको इस बात पर विचार करना चाहिए

कि बड़े लोगों के 'जुर्मों' का तुम लोगों के जेलखाने में बन्द रहने से किसी प्रकार का सम्बन्ध है या नहीं ? तुममें से बहुत से लोग इसलिए जेल भेजे गए हैं कि उन्होंने सचमुच दूसरों के घर में घुस कर चोरी की है। तुममें से बहुत से लोगों ने और किसी तरह की चोरी की है; अर्थात् क़ानून के कथनानुसार तुमने किसी दूसरे शख्स की चीज़ को ले लिया है। तुममें से कुछ लोग ऐसे होंगे जिन्होंने किसी दुकान में घुस कर एक जोड़ा जूता इसलिए चुराया, क्योंकि उनके पास खरीदने के लिए दाम न थे। सम्भव है, तुममें से कुछ लोगों ने हत्या भी की हो। मैं नहीं जानता कि तुम सब लोगों ने क्या-क्या 'जुर्म' किए हैं, पर मैं इतना समझता हूँ कि तुममें ज्यादातर लोगों ने इसी प्रकार का कोई काम किया है। पर तुम लोग इन कामों को करते हुए भी यह नहीं समझ सकते कि तुम ऐसा काम क्यों करते हो।

पर मैं इस बात का भेद अच्छी तरह समझता हूँ कि तुमने उन कामों को क्यों किया ? तुमने उन कामों को इसलिए किया कि तुम्हारे लिए उसके सिवाय और कोई रास्ता ही न था। जब तुम कोई ऐसा काम करते हो तो तुम यही समझते हो कि हम अपनी मरज़ी से इस काम को करते हैं और चाहें तो उसे न करें। पर असल में तुम अपनी मरज़ी से उस काम को हरगिज़ नहीं करते।

साधारण तौर पर विचार करने से इस बात का भेद नहीं समझा जा सकता कि तुम ऐसा काम क्यों करते हो। पर अगर गम्भीरता और ध्यानपूर्वक विचार करो तो तुम समझ सकते हो कि तुम जो कुछ काम करते हो कि वह अपनी परिस्थिति के वश होकर ही करते हो ! जिस प्रकार जेल से बाहर रहनेवाले दूसरे लोग अपनी परिस्थिति के अनुसार तरह-तरह के काम करते हैं, उसी प्रकार तुमको अपनी परिस्थिति से लाचार होकर इस प्रकार के काम करने पड़ते हैं। सुधारक लोग तुमको उपदेश देते हैं कि तुम 'सज्जन' बन जाओ, उससे तुम सुखी हो सकोगे। पर उन्होंने और दूसरे लोगों ने, जिनके पास जमीन-जायदाद है और जो दुनिया में भले आदमी समझे जाते हैं, तुमको 'सज्जन' बनाने का यही रास्ता ठीक समझा है कि तुमको सदा जेलखाने के भीतर ताले बन्द रक्खा जाय और कभी-कभी तुम्हारे सुधार के लिए ईश्वर से प्रार्थना कर दी जाय।

मैं जब इन बातों पर विचार करता हूँ तो मुझे इनमें कुछ भी सचाई या ईमानदारी नहीं जान पड़ती। जेल में जितने 'मुजरिम' कहलानेवाले लोग पाए जाते हैं—मैं 'मुजरिम' का शब्द इसलिए इस्तेमाल करता हूँ कि यह आम तौर पर प्रचलित है, अन्यथा मेरे लिए इसका कोई अर्थ नहीं—उनमें से बहुत ज्यादा तादाद ऐसे लोगों की

होती है, जिनको अच्छा वकील न मिलने के कारण जेल जाना पड़ता है। अच्छा वकील तब तक कैसे मिल सकता है जब तक तुम्हारे पास काफ़ी रुपया न हो? मालदार आदमी को जेल जाने का खतरा बहुत कम रहता है।

तुममें से कितने ही लोग पहली ही बार जेल में आए होंगे। आज जेल का दरवाज़ा खोलकर तुम सबको बाहर निकाल दिया जाय और सरकारी क़ानून जैसे आजकल हैं वैसे ही बने रहें, तो तुममें से बहुत से कल यहाँ वापस भी आ जायँगे। इन लोगों को कोशिश करने पर भी रहने के लिए जेल से अच्छी और जगह नहीं मिलती, इसलिए वे इसी जगह वापस आ जाते हैं। तुममें से कितने ही लोग जेल में रहने के ऐसे आदी हो गए हैं कि वे यही नहीं जानते कि हम इसको छोड़कर और कहाँ जायँ? कुछ लोगों का जन्म का संस्कार ही ऐसा है कि वे मौक़ा लगते ही जेल के मेहमान बन जाते हैं और कोशिश करने पर भी इन्न अदालत को नहीं छोड़ सकते। ऐसे लोग स्वयं अपने जीवन की इस ख़ासियत को नहीं जानते, न इसका कारण समझ सकते हैं। पर तो भी इन सब बातों के कारण मौजूद रहते हैं और यदि सब घटनाओं पर विचार किया जाय तो हम कारणों का पता भी लगा सकते हैं।

एक उदाहरण लो। अमरीका, इङ्गलैण्ड आदि ठण्डे

देशों में गर्मियों की अपेक्षा जाड़े के मौसम में बहुत ज्यादा लोग जेल जाते हैं। ऐसा क्यों होता है? क्या जाड़ों में मनुष्य गर्मियों की अपेक्षा अधिक दुष्ट-प्रकृति या बदमाश बन जाते हैं? नहीं, वरन् इसका कारण यह है कि कोयले की खानों के मालिक जाड़े के मौसम में कोयले का दाम बढ़ा देते हैं। जिस पत्थर के कोयले की लागत चार-पाँच आने मन पड़ती है, उसके लिए लोगों को बारह आने के दाम देने पड़ते हैं, नहीं तो जाड़े में ठिठुर कर मरना पड़ता है। उस दशा में लोगों को जेल जाने के सिवाय और कोई रास्ता नहीं रहता, क्योंकि जेल के कमरे जाड़े के मौसम में गर्म रक्खे जाते हैं। इसी प्रकार जाड़ों में रातों के लम्बी हो जाने के कारण रोशनी में भी ज्यादा खर्च होता है और उससे बचने के लिए भी बहुत से लोग जेल जाते हैं। सम्भव है, तुम इन बातों को न जानते हो और ये तुमको मजाक़ जान पड़ें। पर इसमें सन्देह नहीं कि ये आर्थिक नियम सदा हमारे जीवन में काम करते रहते हैं और इन्हीं से लाचार होकर हमको ऐसे काम करने पड़ते हैं, जिनसे अन्त में जेल जाना पड़ता है।

इसी प्रकार अकाल के समय सुकाल की अपेक्षा बहुत ज्यादा लोग जेल जाते हैं। इसके जवाब में यह हरगिज़ नहीं कहा जा सकता की अकाल के समय मनुष्य सुकाल

की अपेक्षा ज्यादा बदमाश बन जाते हैं। सच बात यह है कि जब तक लोग मुसीबत और कठिनाइयों में नहीं फँसते, तब तक कोई राज़ी-खुशी जेल जाना पसन्द नहीं करता। ये लोग इसीलिए जेल जाते हैं, क्योंकि उनको ऐसी दूसरी कोई जगह नहीं दिखलाई देती जहाँ वे जा सकें। जेलों में जानेवाले प्रायः ग़रीब लोग ही होते हैं और उनके रहने को दुनिया में प्राण-रक्षा का कोई साधन नहीं मिलता, तब वे इस प्रकार के काम करने लगते हैं जिससे उनको जेल जाना पड़ता है। अकाल-मँहगी के समय बहुत से ऐसे लोगों को भी जेल का मुँह देखना पड़ता है जो सुकाल की हालत में वहाँ कभी नहीं जाते।

बहुत समय पहले बकल नाम के एक बहुत बड़े दार्शनिक और इतिहासज्ञ विद्वान् ने बहुत से प्रमाणों का संग्रह करके यह सिद्ध किया था कि बाज़ार में जितने परिमाण में खाने-पीने की चीजों का दाम चढ़ता है, उसी परिमाण में जेलों में क़ैदियों की संख्या भी बढ़ जाती है। जब पानी और रोशनी का टैक्स बढ़ाया जाता है तो उसके फल से अवश्य ही कुछ लोगों को जेल जाना पड़ता है। इसी प्रकार जब अनाज और कपड़े वग़ैरह का दाम बढ़ा दिया जाता है तो उसके कारण अनेक लोगों को जेल का मेहमान बनना पड़ता है।

यह सच है कि तुममें से कुछ लोग ऐसे भी हैं जो अपने पास रुपया होते हुए भी चोरी, उठाईगीरी करते हैं। इसका कारण यह है कि वे लोग दूरदर्शिता से काम लेना चाहते हैं, और उस समय तक ठहरना पसन्द नहीं करते जब कि उनके पास खाने को फूटी कौड़ी भी न बचे। तुममें से कुछ लोग सेंध लगाने या चोरी से दूसरे मकान में घुस जाने का पेशा करते होंगे। कोई समझदार आदमी, अगर उसके पास खाने-पीने का काफ़ी समान हो, तो वह किसी दूसरे आदमी के मकान में आधी रात के समय घुसना और चोर-बत्ती की मदद से अनजान कमरों में हाथ-पैरों के बल चुपके-चुपके चलना और इस प्रकार अपनी जान को खतरे में डालना हरगिज पसन्द नहीं करेगा। मैं जानता हूँ कि तुम लोग अपनी खुशी से कभी ऐसा न करोगे। अगर एक आदमी के पास ट्रङ्कों में काफ़ी कपड़े रक्खे हों; घर में बहुत सा आटा, घी, शक्कर हो; बैङ्क में काफ़ी रुपया जमा हो, तो वह आदमी अँधेरी रात में ऐसे मकानों में इधर-उधर ढूँढ़ते फिरने की तकलीफ़ हरगिज़ न उठाएगा, जिनके दरवाजों और कमरों का उसे कुछ पता नहीं है। इस काम के लिए काफ़ी अनुभव और शिक्षा प्राप्त करने की आवश्यकता होती है, और जो आदमी इस पेशे की तालीम हासिल करते हैं, वे उसी

प्रकार निर्दोष हैं जैसे वकील और डॉक्टर अपने पेशे के लिए दोषी नहीं माने जाते। जिस आदमी की जेब में काफ़ी रुपया होगा वह सड़क पर चलते हुए दूसरे आदमी को पिस्तौल से धमका कर उसका रुपया छीनने की कोशिश नहीं करेगा। हाँ, अगर उसके पास केवल दो-एक रुपया हो तो वह ऐसा कर सकता है। पर अगर उसके पास भी सेठ-साहूकारों के बराबर रुपया हो तो वह ऐसा काम कभी नहीं करेगा। सेठ-साहूकारों को लोगों को लूटने का इससे बहुत अच्छा ढङ्ग मालूम होता है।

जैसे-जैसे अमीर आदमी ग़रीबों को ज्यादा लूटेंगे, वैसे-वैसे ग़रीब लोग भी अपना पेट भरने के लिए इस प्रकार के 'जुर्म' कहलानेवाले कामों का सहारा लेने लगेंगे। चाहे वे इस बात को न समझें, चाहे वे तुरन्त ही इस बात का ख़याल न करें, तो भी वे अपनी मरज़ी के ख़िलाफ़ इस पेशे को अख़्तियार कर लेंगे।

थोड़े दिन पहले अमरीका की शासन-सभा के सामने एक नए क़ानून का मसौदा पेश किया गया था, जिसके अनुसार बच्चे चुरानेवालों के लिए फाँसी की सजा तजवीज़ की गई थी।* निस्सन्देह शासन-सभा के मेम्बर बड़े

---

* अमरीका में मुज़रिमों के बड़े-बड़े संगठित गिरोह अमीरों

बुद्धिमान् हैं जो बच्चे चुराने वालों को मृत्यु-दण्ड देकर इस काम को बन्द कर देना चाहते हैं मैं बच्चों की चोरी को अच्छा नहीं समझता, पर इस सम्बन्ध में शासन-सभा का ढङ्ग बिलकुल ग़लत और व्यर्थ है। बच्चों को चुराना भी आजकल एक पेशा बन गया है, और हमारी मौजूदा व्यापारिक नीति के कारण इसकी खूब तरक्क़ी हो रही है। आजकल रुपया कमाने के बहुत से तरीक़े नए निकले हैं, जिनमें से कितने ही ऐसे अजीब और नए हैं कि हमारे पुरखों ने उनका नाम भी न सुना था। हमारे पुरखों को मालूम भी न था कि अरबों रुपए मूलधन की कम्पनियाँ कैसी होती हैं। न वे ऐसे कारख़ानों की कल्पना कर सकते थे जिनमें लाख-लाख आदमी मज़दूरी करते हैं। जिस प्रकार अमीरों ने ग़रीबों को लूटने के लिए ऐसी कम्पनियाँ और कारख़ानों की सृष्टि की उसी प्रकार किसी ग़रीब आदमी ने कोई धन्धा-रोज़गार न देखकर, बच्चे चुराने का पेशा तलाश किया।

यह 'जुर्म' इसलिए पैदा नहीं हुआ कि आदमी पहले

के लड़के-लड़कियों चुराने का पेशा करते हैं। वे बहुत बड़ी रक़म लेकर उनको छोड़ते हैं। कुछ समय पहले ऐसी घटनाएँ बहुत ज़्यादा बढ़ गई थीं।

की अपेक्षा बदमाश बन गए हैं। कोई आदमी दूसरे का बच्चा इसलिए नहीं चुराता कि वह उसको अपने लिए चाहता है, अथवा वह स्वभाव से ही ऐसा दुष्ट है कि उसे इस काम में किसी तरह का मजा आता है। वरन् वह ऐसा काम इसीलिए करता है कि उसे इससे कुछ रुपया मिलने की आशा रहती है। इस जुर्म को तुम मौत की सजा देकर या क़ानून बनाकर नहीं मिटा सकते। इसके सुधार का केवल एक ही रास्ता है। केवल इस एक जुर्म का ही नहीं, वरन् सब प्रकार के जुर्मों को मिटाने का रास्ता यही है कि लोगों को जीवन-निर्वाह का मौक़ा दिया जाय। जब से सृष्टि आरम्भ हुई है, तब से आज तक इस बात के लिए न कोई दूसरा रास्ता था और न आगे चल कर मिल सकता है। पर तो भी दुनिया के लोग ऐसे अन्धे और बेवक़ूफ़ हैं कि इस बात को जानकर भी अनजान बन जाते हैं अगर संसार में हरएक पुरुष, स्त्री और बच्चे को नेक रास्ते से, सुख के साथ अपनी रोटी कमा कर खाने का मौक़ा दिया जाय तो फिर न जेलें रहेंगी, न क़ैदी, न वकीलों की ज़रूरत होगी, न जजों की। यह हो सकता है कि कुछ लोगों का दिमाग़ ही बिगड़ा हुआ हो और वे शौक़िया ही ऐसे काम करें। पर उनकी तादाद बहुत कम होगी और उनको बजाय जेल के अस्पताल में भेजा

जाना चाहिये। कोशिश करने से ऐसे लोगों का पैदा होना दूसरी पीढ़ी में या हद तीसरी पीढ़ी में क़तई बन्द हो जायगा।

ये बातें केवल मेरी कल्पना नहीं हैं। इसके लिए मैं दो-तीन उदाहरण देता हूँ—

इङ्गलैण्ड के निवासी किसी ज़माने में अपने यहाँ के क़ैदियों को देश के बाहर भेज देते थे। वे उनको जहाज़ पर लादकर ऑस्ट्रेलिया पहुँचा देते थे। इङ्गलैण्ड पर सरदार और रईसों का अधिकार था। वे ही सब ज़मीन के मालिक थे, और बाक़ी तमाम लोगों को उनके अधीन रहकर गुज़र करनी पड़ती थी। इन लोगों का जीवन बड़ी दुर्दशापूर्ण था, जब कि सरदार-रईस लोगों को सिवाय ऐश-आराम के और कोई काम न था! ये रईस और सरदार अपने यहाँ के मुजरिमों को ऑस्ट्रेलिया भेज देते थे, जिससे वे अपने देश में बिना ख़तरे के चैन से रह सकें। जब ये मुजरिम ऑस्ट्रेलिया पहुँचते और वहाँ आज़ादी के साथ रहने का मौक़ा पाते, तो वे भेड़ पालने का पेशा करने लगते; और उनके दूध, मांस, ऊन वग़ैरह से अपना गुज़ारा करके आनन्द-पूर्वक रहते। क्योंकि उस सुनसान और जङ्गली देश में यह काम चोरी करने की अपेक्षा सहज और फ़ायदेमन्द था। थोड़े दिन बाद वे ही मुजरिम

इज्ज़तदार नगर-निवासी बन गए, क्योंकि उनको जीवन-निर्वाह का मौक़ा मिल गया। वे लोग किसी प्रकार का जुर्म नहीं करते थे। वे लोग उन अङ्गरेजों से किसी प्रकार हलके दरजे के नहीं जान पड़ते थे, जिन्होंने उनको देश-निकाला देकर वहाँ भेजा था, वरन् कुछ बातों में वे उनसे भी अच्छे थे। दूसरी पीढ़ी में इन मुजरिमों की सन्तान ऐसी शरीफ़ और इज्ज़तदार बन गई, जैसे संसार के किसी भी देश के लोग होते हैं, और तब वे भी जेलें बनाकर उनमें क़ैदियों को रखने लगे।

अमरीका भी शुरू में इसी प्रकार बसाया गया था। अङ्गरेज़ लोग अपने क़ैदियों को यहाँ लाकर छोड़ देते थे। वहाँ पर उनको खेती-बाड़ी के लिए इच्छानुसार काफ़ी जमीन मिलती थी, जिससे वे कुछ ही दिनों में मालदार बन जाते थे और उसी प्रकार इज्ज़तदार आदमियों के ढङ्ग से रहने लगते थे जैसे संसार के दूसरे देशों के लोग रहते हैं। पर जब इङ्गलैण्ड के बड़े लोगों ने देखा कि अमरीका में लोग बहुत मालदार बनते चले जाते हैं, तो उन्होंने वहाँ जाकर तमाम ज़मीन और खानों पर क़ब्ज़ा कर लिया और बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ क़ायम कर दीं। तब अमरीका में भी उसी प्रकार मुजरिम पैदा होने लगे, जैसे इङ्गलैण्ड में पाए जाते थे। इसका कारण यह नहीं था कि लोग फिर से बुरे

बन गए थे, वरन् यह था कि लोगों से जमीन छीन ली गई थी।

तुम लोगों में से कुछ लोग देहात में रहे होंगे। वह जगह शहरों से अधिक सुन्दर होती है। अगर वहाँ पर तुमने कभी खेतों पर काम किया है, तो तुमको मालूम होगा कि अगर कुछ पशुओं को किसी ऐसे बाड़े में बन्द कर दिया जाय, जहाँ चरने का काफ़ी घास न हो तो वे पशु उछल-कूद मचाएँगे और दीवार को फाँदकर बाहर निकलना चाहेंगे। पर अगर उन्हीं पशुओं को ऐसे खेत में रक्खा जाय, जहाँ पर सबके लिए काफी खाने को हो तो वे सदा बड़ी शान्ति के साथ रहेंगे और कोई काम क़ायदे के खिलाफ़ न करेंगे। यह मनुष्य रूपी पशु भी दूसरे पशुओं के समान ही है, केवल यह उछल-कूद कुछ ज्यादा मचाता है। ये दोनों प्रकार के प्राणी एक ही प्राकृतिक नियम बँधे हुए काम करते हैं।

हर एक मनुष्य की यह इच्छा रहती है कि वह ऐसे रास्ते से अपना गुजारा करे, जिसमें कम-से-कम मिहनत और झञ्झट हो। कोई अक़लमन्द आदमी, जो शुरू में किसी नए देश में पहुँचता है, तो उसे मालूम होता है कि यहाँ पर बहुत सी जमीन बेकार पड़ी है। मिसाल के लिए जो आदमी पचास-सौ साल पहले बम्बई, कलकत्ता जैसे

किसी बड़े शहर में पहुँचे, उनमें से कुछ समझदार लोगों ने देखा कि वहाँ पर बहुत सी जमीन बेकार पड़ी है, और अगर उस पर कब्जा कर लिया जाय तो कुछ समय बाद उससे बहुत फायदा हो सकता है। यह सोचकर वे बहुत सी जमीन के मालिक बन बैठे। अब अगर तुम भी उसी प्रकार जमीन के मालिक बनना चाहो तो वैसा नहीं कर सकते, क्योंकि अब कुछ भी जमीन खाली नहीं बची है। इसलिए तुमको लाचार होकर कोई दूसरा पेशा करना पड़ता है। बहुत से मुक़ामों में तमाम ज़मीन जमींदारों के कब्जे में है और सब लोग वहाँ पर उनकी शर्तों के अनुसार ही रह सकते हैं। ये जमींदार दूसरे लोगों को खूब सताते और लूटते हैं, जिससे उन ग़रीब लोगों का जीवन बड़ी कङ्गाली और दुःख में कटता है। पर मनुष्य का स्वभाव है कि वह जहाँ तक सम्भव हो, आराम के साथ रहने की कोशिश करता है और इसलिए लोग चोरी, डकैती, जेब काटना वग़ैरह नए-नए रोज़गार तलाश कर लेते हैं।

आजकल मनुष्य धनी बनने के लिए सब प्रकार के उपायों से काम लेते हैं। यह आदत भी दूसरी बीमारियों की तरह एक बीमारी है। लोग जब देखते हैं कि कुछ आदमी धनी बन रहे हैं। बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ क़ायम कर

रहे हैं, और उनके द्वारा लाखों रुपए कमा रहे हैं, तो उनको भी यह बीमारी लग जाती है और वे भी उनकी नकल करने लगते हैं। जिस प्रकार चेचक और प्लेग की छूत दूसरे लोगों को लग जाती है, उसी प्रकार लोग इस धनी बनने की बीमारी में खुद बखुद फँस जाते हैं। इसीलिए उन लोगों को दोषी नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि दुनिया में हवा ही ऐसी चल रही है। तुम देखते हो कि बहुत से आदमी अपनी ताकत से ज्यादा सट्टा खेलते हैं, अपना सर्वस्व जुए में लगा देते हैं और अन्त में बर्बाद हो जाते हैं। ये सब लोग धनवान् बनने के लिए पागल हो रहे हैं। ये सब बीमारी के लक्षण हैं और इस प्रकार की आदत को सिवाय बीमारी के और कुछ नहीं कह सकते। इस बीमारी का असर सब लोगों पर पड़ता है, पर इसमें काम-याबी उन्हीं को होती है, जो कि ज़मीन जायदाद के स्वामी बने हुए हैं।

अगर तुम क़ानून की जाँच करोगे तो तुमको पता लगेगा कि जब कुछ लोग बहुत सी ज़मीन-जायदाद इकट्ठी कर लेते हैं तो वे क़ानून बनाते हैं। क़ानूनों का उद्देश्य लोगों की रक्षा करना नहीं होता, और न अदालतें न्याय करने के लिए बनाई जाती हैं। जब तुम्हारा मुक़दमा अदा-लत में पेश हो तो इस बात का बहुत कम असर पड़ता है

कि तुम दोषी हो या निर्दोष। वहाँ पर सबसे ज़रूरी बात यह है कि तुम्हारी तरफ से कोई बहुत होशियार वकील बिना पैसे के मिल नहीं सकता, इसलिए अदालतों का सारा दारमदार पैसे पर रहता है।

जिन लोगों के पास ज़मीन-जायदाद होती है, वे ही क़ानून-रचना करते हैं, जिससे उसकी सहायता से अपनी सम्पत्ति की रक्षा कर सकें। वे अपनी जायदाद के चारों तरफ़ क़ानून का एक बाड़ा या घेरा-सा बना देते हैं, जिससे और लोग उसमें दख़ल न दे सकें। वास्तव में क़ानून उन्हीं लोगों की रक्षा के लिए तैयार किए जाते हैं, जो कि दुनिया पर हुकूमत करते हैं। उनका उद्देश्य कभी न्याय की स्थापना करना नहीं होता। आजकल संसार में इन्साफ़ करने का एक भी साधन मौजूद नहीं है।

इस बात के समझाने के लिए मैं एक मिसाल देता हूँ। अगर समाज में सबके साथ न्याय करने की व्यवस्था हो तो ग़रीब से ग़रीब आदमी को भी वैसा ही होशियार वकील मिलना चाहिए, जैसा बड़े-से-बड़ा अमीर अपने मुक़दमे में खड़ा करता है। इसके बिना न्याय कैसे हो सकता है? पचीस रुपया फीस वाला वकील पाँच सौ रुपए वाले वकील की दलीलों का जवाब कैसे दे सकता है? इसके सिवाय अदालत में ग़रीब आदमी का मुकदमा भी

उतना ही काफ़ी समय लगाकर और उसी प्रकार सफ़ाई के साथ किया जाना चाहिए जैसा कि एक बहुत बड़े अमीर का। यह न हो कि ग़रीब आदमी का मुक़दमा पन्द्रह मिनट में ही ख़तम कर दिया जाय और अमीर आदमी के मुक़दमे में पन्द्रह दिन का समय लगाया जाय।

इतना ही नहीं, अगर तुम अमीर हो और संयोगवश अदालत ने तुम्हारे ख़िलाफ़ फ़ैसला कर भी दिया तो तुम जज के यहाँ अपील करके उस फैसले को रद्द करा सकते हो। पर ग़रीब आदमी अपना मुक़दमा जज की अदालत में नहीं ले जा सकता, क्योंकि उसके पास उतना पैसा नहीं होता। अमीर आदमी अगर जज की अदालत में भी हार जाय तो हाईकोर्ट में जा सकता है, और वहाँ हारने पर भी प्रिवी काउन्सिल में अपील कर सकता है। यह भी सम्भव है कि इस प्रकार उसका मुक़दमा इतने दिनों तक चलता रहे कि वह बूढ़ा होकर मर जाय, और उसे दोषी होते हुए भी जेल न जाना पड़े।

पर अगर तुम ग़रीब हो तो तुम्हारा फ़ैसला फ़ौरन हो जाता है। तुमको पहले ही दोषी समझ लिया जाता है। सरकारी वकील कहेगा कि अगर तुम दोषी नहीं हो तो पुलिस तुमको पकड़ती ही क्यों? यह सच है कि अगर उस मनुष्य को रहने के लिये संसार में कोई जगह होती तो

उसे अदालत में आने की जरूरत न पड़ती। हाकिमों को ऐसे लोगों के मुक़दमों पर ध्यान देने का समय ही नहीं मिलता। और न समाज के बड़े लोगों के पास, जो बड़ी-बड़ी कोठियाँ और बैंक चलाते हैं, मन्दिर और मठ बनवाते हैं, जेलों और अदालतों के लिये बड़े-बड़े मकान तैयार कराते हैं, इन ग़रीबों के लिये इतना रुपया होता है कि साल भर में दो-चार हज़ार क़ैदियों के दोषी या निर्दोषी होने की अच्छी तरह जाँच कर सकें। अगर वर्तमान अदालतों की स्थापना न्याय की रक्षा के लिये की जाती, तो समाज इन तमाम क़ैदियों के लिये किसी ऐसे ही होशियार वकील को नियत करता, जितना होशियार सरकारी वकील होता है। क़ैदियों के लिये भी उसी तरह के और उतने ही होशियार जासूस, नायब वकील, सलाहकार दिए जाते जितने सरकार की तरफ़ से मुक़दमा चलाने में लगाए जाते हैं; क़ैदियों की तरफ़ से भी मुक़दमे में उतना ही रुपया ख़र्च किया जाता जितना कि सरकार की तरफ़ से मुक़दमा चलाने में ख़र्च होता है। जब दोनों पक्षों के पास इस तरह समान शक्ति और साधन मौजूद हों, तब न्याय की भी कुछ आशा की जा सकती है। पर आजकल ग़रीबों के मुक़दमे में सब बातें इससे उलटी होती हैं। सरकारी वकील सदा बहुत होशियार आदमी रक्खा जाता है, और उसकी मदद के लिये जासूस,

पुलिसवाले, सहायक वकील, सब हर तरह के सामान के साथ तैयार रहते हैं, जज भी उसकी बातों को बहुत ज़्यादा ध्यान से सुनते हैं। फिर भी ग़रीब आदमी जेल न भेजा जाय तो क्या हो।

आजकल ज़्यादातर क़ानून जायदाद-सम्बन्धी जुर्मों के लिये बनाए जाते हैं। ज़्यादातर लोग इसीलिये जेल भेजे जाते हैं कि उन्होंने किसी की जायदाद के ख़िलाफ़ कुछ क़ुसूर किया है। यदि सौ, दो सौ निर्दोष आदमी जेल चले जायँ तो इस बात की ज़रा सी भी परवा नहीं की जाती। मुख्य बात यही समझी जाती है कि किसी तरह जायदाद की रक्षा हो। क्योंकि आजकल दुनिया में जायदाद ही सबसे ज़्यादा महत्व की चीज़ है।

इन बातों का कारण क्या है? आजकल प्रचलित सब क़ानून और क़ायदे जायदाद वालों ने अपने फ़ायदे के लिये बनाए हैं। इसलिये आजकल सब कोई मनुष्य क़ानून के अनुसार 'मुजरिम' बतलाया जाय तो उससे यह नहीं समझ लेना चाहिए कि उसने अवश्य ही कोई ऐसा काम किया है जो नीति या चरित्र की दृष्टि से ख़राब समझा जाय। इसके विपरीत जो लोग क़ानून के मुताबिक़ 'मुजरिम' नहीं समझे जाते और जेलों से बाहर शान के साथ रहते हैं, वे भी प्रायः दण्ड के योग्य काम करते रहते हैं। मिसाल के लिये

कितनी ही बार बड़े-बड़े व्यापारी करोड़ों मन अनाज को गोदामों में बन्द करके उसका दाम चढ़ा देते हैं, जिसके फल से हज़ारों बच्चों और बूढ़ों को भूखों मर जाना पड़ता है, हज़ारों लोगों को भिखारी बनना पड़ता है, हज़ारों को जेल जाना पड़ता है। इसी प्रकार ये बड़े लोग करोड़ों मन रूई और ऊन को गोदामों में भर कर जाड़ों में लाखों ग़रीब स्त्री-पुरुषों को ठण्ढ से मरने के लिये लाचार करते हैं। इन कारणों से हर साल हज़ारों लाखों मनुष्य प्राण त्याग देते हैं, इन बड़े लोगों पर कोई हत्या का मुकदमा नहीं चलाता। ऐसा क्यों होता है? इसीलिये कि क़ानून बनानेवाले मालदार और जायदादवाले लोग होते हैं और वे इस प्रकार मनुष्य-जीवन की आवश्यक वस्तुओं को ताले में बन्द कर रखना न्यायानुकूल बतलाते हैं। अगर क़ानून बनाने का अधिकार हमारे-तुम्हारे हाथों में होता तो हम सबसे पहले उन्हीं लोगों को दंड देते जो तमाम ज़मीन-जायदाद के मालिक बने बैठे हैं। प्रकृति ने अनाज, रूई, लकड़ी, पत्थर वग़ैरह चीज़ें सबके लिये पैदा की हैं, पर ये थोड़े से लोग सबका उनसे वञ्चित रखते हैं।

यह बात अच्छी तरह साबित की जा चुकी है कि जिन जुर्मों के लिये लोगों को जेल भेजा जाता है वे प्रायः जायदाद-सम्बन्धी होते हैं। कुछ जुर्म शरीर-सम्बन्धी भी होते हैं, जैसे हत्या, बलात्कार आदि, पर उनकी संख्या बहुत कम

को। तुम चाहे ऐसा क़ानून बना दो कि चोरी करनेवाले हर एक आदमी को फाँसी की सज़ा दी जायगी, पर तो भी इससे चोरी मिट नहीं सकती। किसी समय इङ्गलैण्ड का क़ानून ऐसा था कि वहाँ क़रीब एक सौ तरह के जुर्मों के लिये मौत की सज़ा दी जाती थी, पर तो भी वहाँ काफ़ी जुर्म होते थे। इसके विपरीत आजकल वहाँ क़ैदियों को सख़्त सज़ा बहुत कम दी जाती है, और मौत का दण्ड बहुत कम मुक़दमों में दिया जाता है, इतने पर भी अब वहाँ पहले ज़माने की अपेक्षा बहुत कम जुर्म होते हैं। लोगों को फाँसी देने से हत्याओं का होना नहीं रुकता, वरन् इससे नए हत्यारे पैदा होते हैं !!

यह समझ सकना सहज है कि इन बातों को, जिन्हें हम 'जुर्म' कहते हैं, कैसे मिटाया जा सकता है। पर उस उपाय को कार्यरूप में परिणत कर सकना सहज नहीं है। वह उपाय यही है कि बड़े लोगों के विशेष अधिकारों को नष्ट कर दिया जाय, जिससे सर्व-साधारण को जीवन-निर्वाह का मौक़ा मिल सके। जब तक ये बड़े 'मुजरिम' खेतों और खानों के मालिक बने बैठे हैं, म्युनिसिपैलटियों पर क़ब्ज़ा किए हुए हैं, रास्तों के ठेकेदार बने हुए हैं, तब तक हज़ारों ग़रीब लोगों को जुर्म करके जेल जाना ही पड़ेगा।

इसलिए दुनिया से जुर्म और मुजरिमों (अपराध और

अपराधियों) का दूर करने का रास्ता सिर्फ़ यही है कि अमीर और ग़रीबों का भेद ही मिटा दिया जाय। सब लोग आराम के साथ ज़िन्दगी बिता सकें, सबको रोज़ी कमाने का मौक़ा दिया जाय, ज़मींदारी, जागीरदारी की प्रथाएँ मिटा दी जायँ, एकाधिकार जाता रहे, पैदावार में सब लोगों का हिस्सा हो, अच्छी चीज़ों से सब समान रूप से आनन्द उठा सकें। जब लोग सहज में ही सुख के साथ जीवन व्यतीत कर सकेंगे तो कोई चोरी नहीं करेगा। जिस आदमी का घर भरा हुआ होगा वह दूसरे घर से माल चुराने न जायगा। जब घर में ही आराम के साथ रहने का साधन मिलेगा तो कोई स्त्री बाज़ार में जाकर बैठना पसन्द नहीं करेगी। हमारे समाज के ये दोष समानता द्वारा ही सुधर सकते हैं। जब ऐसा हो जायगा तब जेलों की ज़रूरत ही न रहेगी। जेलें कभी उस उद्देश्य को पूरा नहीं कर सकतीं, जिसके लिये वे बनाई जाती हैं। अगर आज सब जेलों को तोड़ दिया जाय तो उससे अपराधों का होना बढ़ नहीं जायगा। जेलों से कोई आदमी नहीं डरता। जेलें मनुष्य-जाति की सभ्यता के लिये कलङ्क की चीज़ हैं और उनसे यही प्रकट होता है कि जेलों से बाहर रहनेवाले लोग बड़े अनुदार और स्वार्थी हैं और वे अपने लालच के कारण ग़रीब लोगों को उनमें बन्द रखते हैं।

साम्यवाद का आधुनिक स्वरूप

बोलशेविज्म का अर्थ

बोलशेविज्म रूसी भाषा का शब्द है। इसका असली अर्थ तो 'बहुमत' या 'बड़े दल' से है। पर आजकल यह कम्यूनिज्म की जगह काम में लाया जाता है।

कम्यूनिज्म का मतलब मामूली तौर पर आजकल यह समझा जाता है देश की तमाम सम्पत्ति और पैदावार के साधनों (जैसे ज़मीन, कारखाने, खान, रेल, जहाज़ आदि) पर आम लोगों या जनता का अधिकार रहे। निजी जायदाद का क़ायदा उठा दिया जाय और सब लोग देश में पैदा होने-वाली और बनानेवाली तमाम चीज़ों का बिना किसी रुकावट के उपभोग कर सकें। यह सिद्धान्त सबसे पहले जर्मनी के एक महात्मा पुरुष कार्लमार्क्स ने निकाला था। उन्होंने सन् १८४७ में इसका एक मसौदा तैयार किया जिसका

नाम 'कम्यूनिस्ट-मैनीफेस्टो' है। यह मैनीफेस्टो आज तक साम्यवाद को जानने के लिये सबसे प्रामाणिक लेख माना जाता है। कार्लमार्क्स से पहले भी कितने ही विद्वानों ने ग़रीबों के दुःख दूर करने के लिये कई तरह के सिद्धान्त निकाले थे और उन सबको 'सोशलिज्म' के नाम से पुकारा जाता था। पर वे सिद्धान्त थोड़े से लोगों के बीच में ही फैले हुए थे और सर्वसाधारण उनमें किसी तरह का भाग नहीं लेते थे। कार्लमार्क्स ने ही अपने कम्यूनिज्म के सिद्धान्त में सबसे पहले आम लोगों को साम्यवाद के आन्दोलन में शामिल करने पर जोर दिया।

मिहनत पेशावालों का उदय

कार्लमार्क्स ने अपने 'कम्यूनिस्ट मैनीफैस्टो' में बतलाया है, कि जब से संसार में मनुष्य-समाज बना है तब से लोग बराबर दो दलों (Classes) में बँटे रहे हैं, और इन दो दलों में सदा झगड़ा होता रहता है। सबसे पहले जमाने में एक दल मालिकों का था और दूसरा दल उनके ग़ुलामों का। ग़ुलाम लोग तमाम काम करते थे और मालिक पड़े-पड़े मौज करते थे। एक बड़ा बलवा (क्रान्ति) हुआ और मालिक-ग़ुलामवाली समाज मिट गया। इसके बाद एक दल जमींदारों या सरदारों का बना और दूसरा

किसानों का। धीरे-धीरे सरदारों के ज़ुल्म किसानों पर बहुत बढ़ गये। फिर बलवा हुआ और सरदार लोगों को मारकर ख़तम कर दिया गया।

सरदारों के समाज का नाश करनेवाले मध्यम दर्जे के लोग थे। उनका मुख्य काम व्यापार और दस्तकारी था। इन लोगों ने बहुत जल्दी तरक़्क़ी की और कुछ ही समय में ऐसे-ऐसे भारी काम कर दिखाये जिसे आज तक कोई न कर सका था। उन्होंने पुराने ढङ्ग की बादशाहतों को बिलकुल बदल दिया और पार्लीमेंट के ढङ्ग की हकूमत जारी की। धनवानों ने मशीनों के जरिये दस्तकारी, खेती और आने जाने के पुराने तरीक़ों को बिलकुल बदल दिया। उन्होंने साइन्स की मदद से सब चीज़ों की पैदावार को इतना बढ़ा दिया जितना अब तक कोई ख्याल भी न कर सका था।

पर इतनी तरक़्क़ी कर लेने पर भी आज धनवानों को अपने नाश होने का डर मालूम हो रहा है। एक नया दल मज़दूरों या मिहनत पेशावालों का पैदा हो गया है। शुरू में मज़दूरों की मदद से ही धनवानों ने तरक़्क़ी की थी, बड़े-बड़े काम करके दिखाये थे, अपनी दौलत और वैभव को बढ़ाया था। पर अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिये धनवानों ने मजदूरों पर अन्याय भी बहुत किया, और

उनके सुख-दुःख का ध्यान बिलकुल छोड़ दिया। अब मजदूर भी धीरे-धीरे आप अपना सङ्गठन कर रहे हैं। जिस प्रकार धनवानों के दल ने सरदार या जमींदारों के दल को नष्ट कर दिया उसी प्रकार अब मजदूरों का दल धनवानों के दल को खतम कर देना चाहता है।

पूंजीवाद के दोष

धनवानों के कारण जहाँ पैदावार की वढ़ती हुई है; वहाँ अकाल, दरिद्रता, बीमारियाँ और भयङ्कर युद्ध आदि दोप भी बहुत फैल गये हैं। धनवानों के दल या पूँजीवाद के कारण पैदा होनेवाले दोषों का वर्णन मार्क्स ने बहुत विस्तार के साथ किया है। उसका सारांश यह है कि इस ज़माने में व्यापार और दस्तकारी के क़ायदे ऐसे बनाये गए हैं जिससे एक बड़े भारी कारबार पर दो एक आदमियों का पूरा कब्ज़ा (Monopoly) हो जाता है। बाकी तमाम लोगों को उनकी मज़दूरी या नौकरी करने के सिवाय और कोई रास्ता नहीं रहता। इन मज़दूरों को सिर्फ थोड़ी-सी मज़दूरी मिलती है। असली फायदे में उनका कोई हिस्सा नहीं होता। इस तरह से एक कारबार में जो फायदा होता है। उससे दूसरे नये-नये कारबार खोले जाते हैं और पैदावार बढ़ाई जाती है। पर इसका दूसरा नतीजा यह होता है

कि माल जरूरत से ज्यादा बनने लगता है और उसको बेचने के लिये नये-नये बाजार ढूँढ़ने पड़ते हैं। साथ ही जब मज़दूर देखते हैं कि हमारी मिहनत से दूसरे लोग तो मालदार बनते चले जाते हैं, और हम जैसी की तैसी बुरी हालत में पड़े हैं, तो उनमें बेचैनी फैलने लगती है। इस तरह पूँजीवाद के शुरू के जमाने में तो नई-नई मशीनें निकाली जाती हैं; संसार के कोने-कोने में पहुँचने की कोशिश की जाती है, तमाम मुल्कों को एक दूसरे से मिलाने और आपस में ताल्लुक़ पैदा करने का उपाय किया जाता है—पर थोड़े दिन बाद यह नतीजा देखने में आता है कि अपना-अपना माल बेचने के लिये आपस में चढ़ा-ऊपरी (प्रतिद्वन्द्विता) होने लगती है, और मालदार लोग आपस में ही झगड़ने लगते हैं। तमाम दौलत गिनती के थोड़े से आदमियों के पास इकट्ठी हो जाती है और बाकी सब लोग धन की कमी के कारण तकलीफ पाने लगते हैं। अन्त में यह झगड़ा युद्ध के रूप में बदल जाता है और तमाम संसार में मारकाट और रुपये पैसे की गड़बड़ी फैल जाती है। इस तरह धनवान लोग अपने दोष से ही अपनी बर्बादी का सामान पैदा कर लेते हैं और संसार की बागडोर उनके हाथ से निकल कर मिहनत पेशा लोगों के हाथ में चली जाती है।

मिहनत-पेशा लोगों का कार्यक्रम

यूरप के इतिहास और मिहनत पेशा लोगों के आन्दोलन पर बहुत विचार करने के बाद मार्क्स ने यह नतीजा निकाला था कि जब तक धनवानों की हुकूमत को बिल्कुल ख़तम नहीं कर दिया जायगा तब तक मिहनत पेशा लोगों को कामयाबी हासिल नहीं हो सकती। अगर मिहनत पेशा लोग फतह पाने के बाद पुरानी हुकूमत (शासन-प्रणाली) को ज्यों का त्यों रहने दें तो उनको धोखा खाना पड़ेगा। सन् १८७१ में पेरिस में मज़दूरों का जो राज्य कायम हुआ था, वह इसी कारण से सिर्फ दो महीने के भीतर नष्ट हो गया। इसलिये यह जरूरी है कि मिहनत पेशावाले पूँजीशाही हकूमत पर फ़तह पाते ही उसे एकदम नष्ट कर दें और अपनी नये ढङ्ग की हकूमत क़ायम करें। इस हुकूमत में तमाम ताकत मजदूरों, किसानों और दूसरे नौकरी पेशावालों की कमेटियों या पंचायतों के हाथ में रहनी चाहिए।

कम्यूनिस्ट यह भी कहते हैं कि धनवान सहज में या राजी से अपनी हकूमत नहीं छोड़ेंगे। पहले ज़माने में भी जब एक दल (Class) ने दूसरे दल के हाथ से हुकूमत ली थी तो दुनिया में घोर युद्ध और बलवे हुए थे। इसलिये अब अगर मिहनत पेशा दल (Prolitariat

Class) धनवानों के दल (Captalist Class) के हाथ से दुनिया की बागडोर लेना चाहता है तो इसके लिये उनकी हुकूमत को ज़बर्दस्ती लौट देना पड़ेगा।

अब तक का इतिहास

कार्ल मार्क्स ने जो सिद्धान्त निकाले थे उनको काम में लाने की कोशिश सबसे पहले सन् १८६४ में की गई। उस वर्ष तमाम देशों के साम्यवादी नेताओं की एक सभा हुई जिसे प्रथम इंटर नेशनल (अन्तर्राष्ट्रीय सभा) कहा जाता है। यह सभा केवल कम्यूनिस्टों की ही न थी वरन् उसमें साम्यवाद के अलग-अलग सिद्धान्तों को माननेवाले कई दल में शामिल थे। इतनी बात ज़रूर थी कि उस सभा में मार्क्स का हाथ ज्यादा था और उसी ने उसके उद्देश्य, सिद्धान्त और नियमों को बनाया था। यह सभा सन् १८७२ तक क़ायम रही। उसके बाद अनारकिस्ट पार्टी के नेता बकुनिन के साथ मार्क्स का झगड़ा हो गया जिससे वह टूट गई। सन् १८८९ में फिर दूसरी इंटरनेशनल कायम की गई। इसने मार्क्स के सिद्धान्तों को पूरी तरह से मान लिया। यह इंटरनेशल सभा थोड़े साम्यवादी नेताओं की कमेटी न थी वरन् इसमें ऐसे बड़े-बड़े दल शामिल थे जिनके मेम्बरों की संख्या लाखों थी। इस तरह दूसरी

इंटरनेशनल ने मिहनत पेशा लोगों को सङ्गठित कर दिया। पर लोगों को क्रान्ति के लिये तैयार करने का काम फिर भी बाकी रह गया। इस काम को आजकल तीसरी इंटरनेशनल (वोल्शेविक) पूरा कर रही है।

बोलशेविज्म का उद्देश्य

कम्यूनिज्म का नया रूप जिसको आम लोग बोलशेविज्म के नाम से पुकारते हैं, पिछले महायुद्ध के जमाने से पैदा हुआ है। बोलशेविकों ने सन् १९१७ में रूस की पुरानी बादशाहत को खतम करके वहाँ पर किसानों और मजदूरों का राज्य क़ायम किया। सन् १९१९ में बोलशेविकों ने सब देशों के कम्यूनिस्टों को संगठित करके तीसरी इंटर-नेशनल क़ायम की। इस इंटरनेशनल की तरफ से सन् १९२० में जो कांग्रेस हुई थी, उसमें बोलशेविकों ने अपना नया घोषणा-पत्र (मैनीफ़ेस्टो) पेश किया। उस घोषणा-पत्र में बतलाया गया है कि—"अगर्चे युद्ध बंद हो गया है और लड़नेवाले देश आपस में सुलह कर रहे हैं, पर सच्ची शांति अभी कोसों दूर है। जिस दिन पहला महायुद्ध खतम हुआ, उसी दिन से दूसरे महायुद्ध की तैयारी होने लग गई है। यूरोप, अमरीका के देशों में लागडाट पहले से भी ज्यादा बढ़ती जाती है, और रुपये का बाजार दिन पर दिन

खराब होता जाता है। अगर संसार इस नाशकारी महायुद्ध से बचना चाहता है तो इसका एकमात्र रास्ता यही है कि दुनिया में से धन की प्रधानता (पूँजीवाद) को खतम कर दिया जाय और ग़रीब लोगों को उनका पूरा हक़ मिलने लगे।

"धनवानों की हकूमत या पूँजीवाद (कैपटेलिज्म) के नाश होने का समय अब पास आ गया है। पिछले महायुद्ध का एक फल यह हुआ है, अबतक पूँजीवाद की जिन बुराइयों को थोड़े से साम्यवादी लोग ही समझते थे, उनको अब संसार के करोड़ों आदमी साफ़ तौर पर देख और समझ रहे हैं। यह धनवानों की हकूमत या पूँजीवाद का ही फल है कि संसार में इतनी मारकाट हुई जिसके कारण लोग भूखों मर रहे हैं, ठण्ढ से बचने को कपड़े नहीं पाते, तरह-तरह की बीमारियाँ फैल रही हैं, और मनुष्य एक दूसरे के दुश्मन बनते जाते हैं। पहले बहुत से नर्मदल के लोग विचार किया करते थे कि पूँजीवाद को नष्ट किये बिना ही संसार में शांति और सुख फैलाने की कोशिश की जाय। पर अब वे अपनी ग़लती को समझ गये हैं। सैकड़ों वर्षों तक परिश्रम करके लोगों ने जो पारलीमेंट, प्रजातंत्र आदि शासन कायम किये थे, और तरक़्क़ी की जो बड़ी
बीरें सोची थीं; उन सबको पूँजीवाद के
एक ही महायुद्ध ने चौपट कर दिया।

"महायुद्ध के कारण यूरोप के निवासी ही नहीं, वरन् तमाम संसार के रहनेवाले तरह-तरह के कष्टों में फँस गये हैं। उनके उद्धार का रास्ता बोलशेविज्म के सिवाय और कुछ नहीं है। इस समय संसार में जैसी घोर हलचल मची हुई है, उसे देखते हुए एक ऐसी मजदूर ताक़त की जरूरत है जो बराबर मिहनत पेशावालों को ठीक रास्ता दिखाती रहे और अन्त में संसार पर उनकी हुकूमत क़ायम कर दे। ऐसे समय में पुराने ख्यालवाले लोगों से कोई काम सिद्ध नहीं हो सकता और हिचक-हिचककर काम करनेवाले लोग करे-धरे पर भी पानी फेर देंगे। सिर्फ मिहनत पेशा-वालों का मजबूत संगठन ही संसार को इस तरह नाश होने से बचा सकता है। इसके लिये मिहनत पेशावालों को खूब ताक़त हासिल करनी चाहिये। सब तरह का सामान इकट्ठा करना चाहिये। और सब लोगों से उनकी ताक़त के मुताबिक काम कराना चाहिये। इस तरह कोशिश करने से महायुद्ध का नुक़सान पूरा हो जायगा और संसार की इतनी तरक्की होगी जिसका हम इस समय ख्याल भी नहीं कर सकते।"

यह ख्याल करना कि कम्यूनिस्टपार्टीवाले या बोलशे-विक लोग संसार में इसलिये क्रान्ति (बलवा) करा रहे हैं कि वे खुद तमाम देशों के मालिक बन जायँ—सबसे बड़ी

और भयंकर ग़लती है। कम्यूनिस्ट लोग तो आजकल संसार में मची हुई मारकाट को जल्दी से ख़तम करने के लिये यह सब कोशिश कर रहे हैं। क्योंकि जब तक मिहनत पेशावालों की हुकूमत कायम नहीं की जायगी और धनवान दलवालों (पूँजीवादियों) को नहीं दबाया जायगा तब तक यह लड़ाई-झगड़े सैकड़ों वर्षों में भी ख़तम नहीं होंगे। इसका फल यह होगा कि बार-बार महायुद्ध होंगे; घेरा डालकर लोगों को भूखों मारा जायगा; अकाल और रोग फैलेंगे; आपस में वैर-भाव बढ़ेगा और अन्त में तमाम सभ्यता का नाश हो जायगा।

बोलशेविज्म और प्रजातन्त्र

कितने ही लोग बोलशेविकों के ऊपर यह इलज़ाम लगाते हैं कि वे प्रजातंत्र के सिद्धान्तों के खिलाफ़ काम करते हैं। यह सच है कि बोलशेविक आजकल के प्रजातंत्र शासनों को अच्छा नहीं समझते और उनको बदलना चाहते हैं। इसका कारण यह है कि आजकल प्रजातंत्र के नाम से जो हकूमत की जाती है, वह कोरा ढोंग है और प्रजातंत्र के असली सिद्धान्तों के खिलाफ़ है। आजकल के प्रजातंत्र राज्य असल में धनवानों की खुदमुख्तार हकूमत हैं। यद्यपि दिखाने के लिये इनमें सर्वसाधारण को 'वोट'

या राय देने का अधिकार दे रखा है, पर सच पूछा जाय तो यह धनवानों की निरंकुश हुकूमत को ढँकने का एक पर्दा है। ग़रीब लोग अपनी कंगाली और अशिक्षा के कारण वोट का अधिकार पाने पर भी उससे कुछ फ़ायदा नहीं उठा सकते। इसके सिवाय जब मौक़ा आता है तब मालदार लोग इस पर्दे को भी उतारकर फेंक देते हैं। बहुत से लोग कहते हैं कि सर्वसाधारण में शिक्षा फैलाई जाय, जिससे वे अपने हक़ों को जान सकें और 'वोट' के अधिकार का ठीक तरह से उपयोग कर सकें। पर वे यह बात भूल जाते हैं कि शिक्षा और आन्दोलन के तमाम साधन; जैसे स्कूल, प्रेस, अखबार, खबरों की एजंसियाँ आदि भी इस समय मालदारों के ही हाथ में हैं।

कुछ लोगों का यह भी कहना है कि हुकूमत की ताक़त फौज के हाथ में दे देनी चाहिये, जिससे वह मालदारों की हुकूमत को खतम कर दे। पर कम्यूनिस्ट इस सैनिक-साम्य-वाद के खिलाफ़ हैं। वे कहते हैं कि मिहनत पेशावालों का उद्धार उनकी ताक़त से ही हो सकता है। कम्यूनिस्ट लोगों का काम इस सम्बन्ध में सिर्फ़ इतना है कि वह मिहनत पेशावालों को रास्ता दिखलाते रहें। बोलशेविक यह भी समझते हैं कि मालदार लोग अपनी हुकूमत और विशेष अधिकारों को क़ायम रखने के लिये सब तरह के राजनैतिक,

आर्थिक और फ़ौजी उपायों से काम लेंगे। इसलिये माल-दारों और ग़रीबों का झगड़ा तब तक कभी खत्म नहीं हो सकता जब तब कि दोनों दलों में एक बार खुल्लमखुल्ला खूब झगड़ा न हो लेगा और मज़दूर उसमें जीत हासिल न कर लेंगे।

बोलशेविकों की कार्य-प्रणाली

इन बातों से बोलशेविकों या कम्यूनिस्टों के काम करने का ढङ्ग बहुत कुछ समझा जा सकता है। कम्यूनिस्ट लोगों को अपने लिये हमेशा मिहनत पेशावालों का एक हिस्सा समझना चाहिये, सदा उनके सङ्गठन की कोशिश करते रहना चाहिये, और मज़दूर तथा किसानों की जो कमेटियाँ पहिले से बनी हों उनका काम चलाते जाना चाहिये। पर साथ ही इस बात का भी ख्याल रखना चाहिये कि मिहनत पेशावालों को आगे बढ़ाया जाय और उनको लक्ष्य (निशाने) तक पहुँचने का रास्ता बतलाया जाय। इसलिये कम्यूनिज्म के माननेवालों का फ़र्ज है कि वे खुद इन सिद्धान्तों की पूरी पाबन्दी करें, और अपने दल के नियमों को खूब कड़ा बनावें।

तालाब की कहानी।

किसी जमाने में एक बड़ा सूखा देश था। उस देश के रहनेवालों को पानी की कमी से बड़ी तकलीफ़ उठानी पड़ती थी। वे सुबह से रात तक सिवाय पानी तलाश करते फिरने के और कोई काम नहीं करते थे। कितने ही लोग पानी के बिना मर भी जाते थे।

उसी देश में कुछ लोग ऐसे भी थे जो दूसरे लोगों की बनिस्बत ज्यादा चालाक थे और उन्होंने अपने लिये बहुत सा पानी इकट्ठा कर रखा था। इन लोगों का नाम पूँजीपति था। एक दिन ऐसा हुआ कि उस देश के बहुत से लोग उन पूँजीपतियों के पास गये और उनसे थोड़ा पानी माँगा। इस पर पूँजीपतियों ने जवाब दिया—"जाओ, तुम लोग बड़े बेवकूफ हो। हम अपना इकट्ठा किया हुआ पानी तुमको क्यों देने लगे? क्या तुम चाहते हो कि हम भी पानी के लिये तुम्हारी तरह मारे मारे फिरें। पर देखो, अगर तुम हमारी नौकरी करना मंजूर करो तो तुमको पानी मिल सकता है।"

लोगों ने जवाब दिया—"तुम हमको पीने के लिए पानी दो, और हम अपने लड़के बच्चों के साथ तुम्हारे नौकर हो जायँ।" ऐसा ही हुआ।

वे पूँजीपति समझदार और ढंग से काम करनेवाले आदमी थे। उन्होंने सब लोगों का संगठन करके उनके अलग अलग दल बना दिये। हर एक दल का एक मुखिया बनाया गया। एक दल पानी के चश्मों (सोतों) पर रहकर पानी इकट्ठा करने लगा; दूसरा दल पानी को लाने का काम करने लगा; तीसरे दल के सुपुर्द नये चश्मे तलाश करने और कुएँ खोदने का काम किया गया; चौथा दल पानी लाने के लिये बहुत से डोल और दूसरे बरतन तैयार करने लगा। इस तरह बाक़ायदा काम करने से बहुत सा पानी इकट्ठा होने लगा। उस पानी को रखने के लिये पूँजीपतियों ने एक बहुत बड़ा तालाब बनवाया जिसका नाम 'बाजार' था। उस तालाब के सिवाय और किसी जगह से कोई पानी नहीं पा सकता था। जो लोग पूँजीपतियों के नौकर बनकर पानी लाने का काम करते थे उनको भी इस तालाब में से ही पानी लेना पड़ता था। जब लोग पानी भरकर तालाब में लाये तो पूँजीपयियों ने उनसे कहा—"देखो, तुम पानी की एक डोल जो चश्मे से लाकर तालाब में डालोगे उसके लिए तुमको एक आना मिलेगा

और जब तुम अपने पीने के लिये तालाब में से एक डोल पानी लोगे तो उसका दाम दो आना देना होगा। बचा हुआ एक आना हमारा नफ़ा होगा। क्योंकि अगर कुछ नफ़ा या बचत न होगी तो हम यह काम क्यों करेंगे? फिर तुम लोग प्यासे मर जाओगे।"

उन लोगों ने पूँजीपतियों के इस क़ायदे को बहुत अच्छा समझा, क्योंकि वे बहुत कम अक़ल रखते थे। वे मुद्दतों तक बड़ी मिहनत और ईमानदारी से तालाब में पानी लाने का काम करते रहे। पूँजीपति उनको एक डोल पानी की मजदूरी एक आना देते थे। और जब वे लोग अपने और अपने बालबच्चों के लिए पानी खरीदते थे तो उनको एक डोल का दाम दो आना देना पड़ता था।

कुछ समय बाद वह तालाब जिसका नाम 'बाजार' था, लबालब भर गया। क्योंकि लोगों को एक डोल पानी का जो दाम मिलता था उससे वे सिर्फ़ आधा डोल पानी खरीद सकते थे। इस तरह हर बार में आधा डोल पानी तालाब में बढ़ता था। पानी लानेवाले लोगों की तादाद बहुत थी और पूँजीपति बहुत थोड़े थे। वे पानी भी दूसरे लोगों के बराबर ही पी सकते थे। इसलिए धीरे-धीरे तालाब में पानी बढ़ता गया और आखीर में उसमें एक बूँद पानी की भी जगह नहीं रही। यह देखकर पूँजीपतियों ने लोगों से कहा—

"देखो, अब इस तालाब में जिसका नाम 'बाजार' है, पानी के लिये बिलकुल जगह नहीं है। इसलिये अब तुम पानी लाना बन्द कर दो और जब तक तालाब खाली न हो जाय तब तक अपने घर बैठो।"

पर जब लोगों को पानी लाने के बदले में पैसे मिलने बन्द हो गये तो वे पानी खरीद भी नहीं सकते थे पूँजीपतियों ने जब देखा कि तालाब का पानी कोई नहीं खरीदता और उससे उनको जो नफ़ा होता था वह बन्द हो गया, तो उनको भी चिन्ता सताने लगी। उन्होंने आपस में सलाह करके कहा—"आजकल व्यापार बड़ा मन्दा पड़ गया है, इसलिये हमको पानी बेचने के लिये इश्तहार देना चाहिये।" इसलिये उन्होंने अपने कितने ही आदमी भेजे जो दूर-दूर सड़कों पर फिरकर चिल्लाने लगे—"जो कोई आदमी प्यासा हो वह तालाब के पास आकर पूँजीपतियों से पानी खरीदे, क्योंकि उसमें बहुत सा पानी इकट्ठा हो गया है और उसका दाम दो आना डोल से घटाकर सात पैसे का एक डोल कर दिया गया है।"

पर लोगों ने जवाब दिया—"जब तक तुम हमको नौकर न रखो हम पानी किस तरह खरीद सकते हैं? तुम पहले की तरह हमको नौकर रखो फिर हम खुशी से तुम्हारा पानी

खरीदेंगे। फिर तुमको इश्तहार देने या पानी का दाम घटाने की कोई जरूरत न होगी।"

इस पर पूंजीपतियों ने कहा—"जब तालाब का पानी किनारे पर होकर बह रहा और जमीन में फैलकर बर्बाद हो रहा है, तब हम तुमसे पानी मँगाकर क्या करेंगे? इसलिये तुम लोग पहले पानी खरीदो और जब तालाब खाली हो जायगा तब हम फिर तुमको नौकर रखेंगे।"

इस तरह हालत जैसी थी वैसी ही बनी रही। क्योंकि पूँजीपति पानी लाने के लिये लोगों को नौकर नहीं रख सकते थे और लोग बिना मजदूरी पाये पानी खरीद नहीं सकते थे, जिसको कुछ दिन पहले उन्होंने खुद ही इकट्ठा किया था। यह देखकर सब लोग कहने लगे कि यह 'व्यापार-संकट' का समय है।

अब लोग प्यास के मारे बड़ी तकलीफ़ पाने लगे। क्योंकि अब उनके बाप-दादों के जमाने की तरह हरएक आदमी को पानी ढूंढ सकने की आजादी नहीं थी। अब चश्मों, कुओं, पानी की रहट, पानी भरने के बरतन, वगैरह सब चीजों पर पूजीपतियों का कब्जा था। कोई आदमी सिवाय बाजार रूपी तालाब के और किसी जगह से पानी नहीं पा सकता था। इस सबब से लोगों में बड़ी भारी

नाराजी फैलने लगी और वे पूंजीपतियों खिलाफ़ बातें करने लगे। उन्होंने पूँजीपतियों से कहा—

"देखो, पानी तालाब में से जमीन पर गिरकर बरबाद हो रहा है और हम प्यासे मर रहे हैं। हमको थोड़ा पानी दो जिससे हमारी जान बचे।"

पूँजीपतियों ने जवाब दिया—"ऐसा हरगिज नहीं हो सकता।" और तब वे लोग आपस में कहने लगे—"व्यापार, व्यापार के ढंग से ही किया जाता है। अगर हमारे पास ज्यादा माल है तो क्या हम उसको लुटा देंगे।

पर पूंजीपतियों को भी दिल के भीतर चिन्ता लगी हुई थी। क्योंकि कोई उनसे पानी नहीं खरीदता था और उनका कारबार बन्द पड़ा था। वे आपस में कहने लगे—"ऐसा मालूम होता है कि हमने पहले जो बहुत फ़ायदा उठाया था उसी के सबब से अब हमारा नुकसान हो रहा है। पर इसका क्या सबब है कि हमारा लाभ हमारी हानि का कारण बन गया। इस सवाल के सुलझाने के लिये विद्वान् उपदेशकों को बुलाकर पूछना चाहिये।"

जब विद्वान् लोग आये तो पूँजीपतियों ने अपना सवाल उनके सामने रखा। कुछ विद्वानों ने कहा—"इस आफ़त का सबब जरूरत से ज्यादा पानी इकठ्ठा हो जाना है।" दूसरों ने कहा—"यह हालत आपस में विश्वास की कमी

के सबब से पैदा हुई है।" तीसरे दलवालों ने कहा—"इस वर्ष में पाँच सूर्य ग्रहण पड़े हैं उन्हीं के फल से यह खराबी पैदा हुई है।" जब कि उपदेशक लोग इस तरह अपनी-अपनी राय जाहिर कर रहे थे तब पूंजीपति लोग ऊँघ रहे थे; क्योंकि यह भी अमीरी का एक चिन्ह समझा जाता था। जब वे जगे तो विद्वानों से कहने लगे—"बस, बहुत ठीक है। आपकी बातें बड़ी अक़्लमन्दी की हैं। अब आप पानी भरनेवाले लोगों के पास जाकर उनको भी ये बातें समझा दीजिये, जिससे वे चुपचाप बैठे रहें और हल्ला-गुल्ला मचाकर हमको तंग न करें।

पर उपदेशकों को उन लोगों के पास जाने में बहुत डर लगता था। लोग उनकी थोथी बातों को पसन्द नहीं करते थे और उनसे झगड़ा करने को तैयार हो जाते थे। इसलिये उन्होंने पूंजीपतियों से कहा—"मालिक हमारी विद्या की यह ख़ासियत है कि जिस आदमी का पेट ख़ूब भरा होता है और जिसके पास बहुत सा पानी होता है उसी को हमारी बातें अच्छी मालूम होती हैं। पर जिस आदमी का पेट खाली हो और जिसे प्यास लगी हो उसे हमारी बातों में कुछ मजा नहीं आता और वह उल्टा चिढ़ता है।" पूँजीपतियों ने कहा—"जाओ, क्या तुम हमारे आदमी नहीं हो? तुमको हमारा हुक्म मानना होगा।"

तब उपदेशक पानी भरनेवाले लोगों के पास जाकर उनको अर्थशास्त्र का लेक्चर सुनाने लगे। उन्होंने बतलाया कि किस तरह तालाब में पानी बढ़ जाने से पानी का अकाल पड़ गया और लोगों को प्यासा मरना पड़ रहा है। उन्होंने विश्वास की कमी और ग्रहण की बातें भी लोगों को समझाई। पर लोगों को उनका बातें बिलकुल गप्प जान पड़ीं और वे चिल्लाकर बोले—"तुम गञ्जे सिरवाले लोगों का यहाँ कोई काम नहीं। तुम हमारे सामने से चले जाओ! क्या तुम इस तकलीफ़ के समय हमसे मजाक करने आये हो? कहीं बहुत ज्यादा चीज इकट्ठा हो जाने से भी अकाल पड़ता है! यह कह कर उन लोगों ने उपदेशकों को मारने के लिये पत्थर उठाये और वे अपनी जान लेकर भागे।

पूंजीपतियों ने देखा कि लोगों पर उपदेशकों के व्याख्यानों का कुछ असर नहीं पड़ा। उनकी नाराजी बराबर ज्यादा होती जाती है और इस बात का डर है कि शायद वे तालाब से जबरदस्ती पानी लेने की कोशिश करें। तब उन्होंने बहुत से साधू और महन्तों को बुलाया जो दरअसल ढोंगी मनुष्य थे। ये नकली साधू लोगों को इस तरह समझाने लगे—"हे मनुष्यो, परमेश्वर की आज्ञा है कि तुम्हारे ऊपर जो कष्ट आया है उसे तुम शान्ति के साथ सहो और पानी

की इच्छा मत करो। ऐसा करने से तुम्हारी आत्मा पवित्र बनेगी और मरने के बाद तुम स्वर्ग भेजे जाओगे; जहाँ कोई पूँजीपति नहीं है और चाहे जितना पानी मिलता है। पर अगर तुम पूंजीपतियों के पानी को जबरदस्ती लेने की कोशिश करोगे तो तुमको बड़ा पाप लगेगा और तुम अनन्त काल तक नरक में पड़े कष्ट भोगते रहोगे।"

पर कुछ धर्म-प्रचारक सच्चे भी थे और ईश्वर के हुक्म के मुताबिक चलना अपना फ़र्ज समझते थे। उन्होंने पूंजी-पतियों की तरफ़दारी नहीं की और उनकी बुराइयाँ लोगों को समझाईं।

पूजीपतियों ने देखा कि लोग न तो उपदेशकों के व्याख्यानों से समझे और न उन्होंने धर्म-प्रचारकों की नसीहत पर ध्यान दिया। वे अब भी पूंजीपतियों के खिलाफ़ बात करते हैं। तब पूंजीपति तालाब के किनारे आये और पानी में उँगलियाँ डुबाकर लोगों को पानी की बूँदें बाँटने लगे। इन बूँदों का नाम 'दान' था और इनका स्वाद बड़ा खारी था।

पूंजीपतियों ने देखा कि लोगों पर 'दान' का भी कुछ असर नहीं पड़ा। वे प्यास की तकलीफ़ के कारण गुस्से में भरकर तालाब के किनारे इकट्ठे हो रहे हैं और शायद जबरदस्ती पानी पर कब्जा कर लेंगे। तब उन्होंने आपस में छुपकर कुछ सलाह की और लोगों में अपने कुछ जासूस

भेजे। उन जासूसों ने उन लोगों में से सबसे ज्यादा ताक़तवर और लड़ने के काम में होशियार लोगों को तलाश किया। जासूसों ने उनके कानों में चुपके से कहा—"तुम लोग पूंजीपतियों के आदमी बनकर रहोगे और इन प्यासे लोगों से तालाब की हिफ़ाजत करोगे तो तुमको भरपेट पानी मिलेगा और तुम अपने बाल-बच्चों के साथ आराम से गुजर कर सकोगे। तुम हमारे साथ चलो।"

जासूसों की इन चिकनी-चुपड़ी बातों को सुनकर वे ताक़तवर और लड़ाई में होशियार आदमी उनमें फँस गये। क्योंकि वे प्यास के सबब से बड़ी तकलीफ़ पा रहे थे। वे पूँजीपतियों के पास गये और उन्होंने इन लोगों के हाथों में तलवार, बन्दूक़ और लाठियाँ दीं। वे लोग तालाब की रखवाली करने लगे और जब कभी प्यासे लोग जबरदस्ती तालाब से पानी लेने की कोशिश करते तो मार-मार कर उनको हटाने लगे।

   

कुछ दिनों बाद तालाब का पानी घट गया। क्योंकि पूँजीपतियों ने अपने शौक़ के लिये फव्वारे और रङ्गीन मछलियों के कुण्ड बनाये। इसके सिवा उनके लड़कों, बच्चों और औरतों ने नहाने-धोने, खेल-तमाशे में बहुत सा पानी

खर्च कर दिया। इस तरह कुछ दिनों में तालाब का बहुत सा पानी निकल गया।

जब पूँजीपतियों ने देखा कि तालाब खाली हो चला तो वे कहने लगे कि—"अब व्यापार-संकट ख़त्म हो गया।" उन्होंने तालाब में पानी भरने के लिये लोगों को फिर नोकर रक्खा। लोग पानी का जो एक डोल तालाब में लाते थे उसका दाम एक आना मिलता था और पूँजीपति तालाब में से जो एक डोल पानी निकालकर बेचते थे उसका दाम दो आना लगता था। इस तरह उनको ख़ूब फायदा होता था। थोड़े दिनों में बहुत सा पानी इकट्ठा हो गया और तालाब फिर लबालब भर गया। पूँजीपतियों ने यह देखकर फिर लोगों को नोकरी से छुड़ा दिया।

जब इस तरह लोगों ने तालाब को बार-बार किनारे तक भरा और इसके बाद उनको उस समय तक बेकारी के सबब से प्यासा मरना पड़ा जब तक कि पूँजीपति और उनके घर के लोग उस पानी को खर्च या बरबाद न कर दें, तब ऐसा समय आया कि उस देश में कुछ नये लोग पैदा हुए जिनका नाम आन्दोलनकारी था। इन आन्दोलनकारियों ने पानी भरनेवाले लोगों को समझाया कि अगर वे आपस में सङ्गठन करके (मिलकर) काम करें तो उनको पूँजीपतियों का नोकर नहीं रहना पड़ेगा और न

पानी की कमी से प्यासा मरना पड़ेगा। पूँजीपतियों की निगाह में ये आन्दोलनकारी प्लेग के कीड़ों की तरह भयङ्कर थे और वे चाहते थे कि उनको मारकर खत्म कर दिया जाय। पर लोगों के डर से वे ऐसा न कर सके।

आन्दोलनकारी पानी भरनेवाले लोगों को जो उपदेश देते थे वह इस तरह था—

"हे अनसमझ मनुष्यो, तुम कब तक झूठी बातों पर भरोसा करके ठगाते रहोगे। ये पूँजीपति और उनके उपदेशक तुमसे जो बातें कहते हैं वे सब चालाकी से भरी हैं। इसी तरह ढोंगी साधू महन्त तुमको बहकाते हैं कि यह ईश्वर की मरजी है कि तुम सदा भूखे और प्यासे रहो। पर यह तो विचारो कि तुमको पानी की कमी क्यों होती है? इसका सबब यह है कि उसके खरीदने को तुम्हारे पास पैसा नहीं होता। तुम्हारे पास पैसे की कमी क्यों होती है? इसका सबब यह है कि तुम इस बाजार रूपी तालाब में डालने के लिये जो एक डोल पानी लाते हो उसका दाम तुमको एक आना मिलता है पर जब तुम अपने पीने के लिए इसमें से एक डोल पानी लेते हो तो उसका दाम दो आना देना पड़ता है। इस तरह मालदारों को आधा डोल पानी नफ़ा में बचता है। तुमको जितनी तनख़ाह मिलती है उससे तुम आधे पानी से ज्यादा हरगिज़

खरीद ही नहीं सकते। क्या तुम यह नहीं समझ सकते कि इस तरीक़े से तालाब के पानी का जरूरत से ज्यादा बढ़ जाना लाज़मी है ? एक तरफ़ तो तुमको पानी की कमी से तकलीफ़ उठानी पड़ती है और दूसरी तरफ़ तालाब में पानी बरबाद होता है। इसलिए तुमको अच्छी तरह यह समझ लेना चाहिये कि तुम जितना ज्यादा काम करोगे और पानी इकट्ठा करने की जितनी ज्यादा कोशिश करोगे उतना ही तुम्हारे हक में बुरा होगा।"

आन्दोलनकारी बहुत दिनों तक लोगों को इस तरह समझाते रहे, पर किसी ने उनकी बातों पर ध्यान नहीं दिया। आखीर में बहुत बरसों बाद कुछ लोग उनकी बातें सुनने लगे। उन्होंने आन्दोलनकारियों से कहा—

"तुम जो कहते हो वह सच है। हमारी तकलीफ़ों का सबब पूँजीपति और उनका नफ़ा ही है। उनके नफ़े के सबब से ही हमको हमारी मिहनत का फल नहीं मिलता। हम जितनी ज्यादा मिहनत करते हैं उतनी ही जल्दी तालाव भर जाता है और तब हमको आधा पानी भी मिलना बन्द हो जाता है। पर इसका क्या इलाज हो सकता है ? ये पूँजीपति बड़े सख्त दिल के आदमी हैं और उनकी दया-पूर्ण बातें कोरी दिखावटी हैं। अगर तुमको कोई ऐसा रास्ता मालूम हो जिससे हम उनके बंधन से छूट सकें तो

बतलाओ। पर अगर तुमको हमारे छुटकारे का कोई सच्चा रास्ता नहीं मालूम है तो कृपा करके चुपचाप बैठे रहो जिससे कम से कम हम अपने दुःखों को भूल सकें।"

आन्दोलनकारियों ने जवाब दिया—"हमको एक रास्ता मालूम है जिससे तुम्हारे दुःख दूर हो सकते हैं।"

लोगों ने कहा—"देखो, हमको धोखा मत देना। क्योंकि हमारी यह हालत सदा से चली आई है और इससे छूटने का उपाय ढूँढते ढूँढते कितने ही आदमी मर गये। इसलिए अगर सचमुच तुमको कोई रास्ता मालूम हो तो हमको जल्दी बतलाओ।"

तब आन्दोलनकारी लोगों को समझाने लगे—"तुमको इन पूँजीपतियों की ऐसी क्या जरूरत है जिसके लिये तुम उनको अपनी मिहनत में से एक बड़ा हिस्सा देते हो? वे तुम्हारे लिए ऐसा कौन बड़ा काम करते हैं जिसके बदले में उनको इतनी बड़ी भेंट दी जाय? उनका काम सिर्फ़ यह है कि वे तुम्हारा सङ्गठन कर देते हैं, तुम्हारे अलग अलग दल बना देते हैं, और हर एक दल को जुदा जुदा काम बतला देते हैं। इसके बाद तुम जो पानी लाते हो उसी में से वे थोड़ा पानी तुमको दे देते हैं। अब इस तकलीफ़ से छूटने की तरकीब सुनो। जो काम तुम्हारे लिए पूँजीपति करते हैं उसे तुम ख़ुद ही कर लो। तुम ख़ुद अपना संग-

ठन करो, अपने अलग-अलग दल बना लो और अलग-अलग काम बाँट लो। इस तरह तुमको इन पूँजीपतियों की कोई जरूरत नहीं रहेगी और न उनको कुछ नफ़ा देना पड़ेगा। तुम लोग मिहनत करके जो पानी लाओगे उसे भाइयों की तरह सब आपस में बाँट लोगे। जब हर एक आदमी को उसकी जरूरत के मुताबिक काफ़ी पानी मिलने लगेगा तो तालाब कभी हद से ज्यदा नहीं भरेगा। फिर अगर कभी पानी बहुत बढ़ जाय तो तुम भी अपने दिल-बहलाव के लिए फव्वारे और मछलियों के कुण्ड बना सकते हो, जैसा कि आजकल पूँजीपति लोग करते हैं। पर ये दिलबहलाव की चीजें सबके वास्ते होंगी।

लोगों ने कहा—"हम इस काम को किस तरह से करें? क्योंकि यह बात हमारे फ़ायदे की मालूम होती है।"

आन्दोलनकारियों ने जवाब दिया—"तुम अपने में से कुछ होशियार आदमी चुनो जो तुम्हारा सङ्गठन कर सकें; तुम्हारे अलग-अलग दल बनावें; और सब लोगों से अपनी देख-रेख में काम लें, जैसा कि आजकल पूँजीपति करते हैं। पर याद रखो कि ये आदमी पूँजीपतियों की तरह तुम्हारे मालिक नहीं होंगे। ये तुम्हारे भाइयों की तरह ही रहेंगे और तुम्हारी मरजी के मुताबिक काम करेंगे। ये अपने लिए अलग नफ़ा न लेंगे, बल्कि इन लोगों को भी दूसरे

लोगों की तरह एक हिस्सा या दूसरों के वरावर तनखाह मिलेगी। फिर समय-समय पर तुम इन लोगों की जगह नए आदमी चुन सकते हो, जो इसी तरह तुम्हारा सङ्गठन करेंगे।"

इन वातों को लोगों ने खूव कान लगाकर सुना और दिल से पसन्द किया। ये वातें उनको अपने भले की मालूम हुईं, और इनका कर सकना भी कठिन नहीं जान पड़ा। इसलिए वे एक आवाज से वोले—"जैसा तुम कहते हो वही हो। हम इस काम को जरूर कर सकते हैं।"

लोगों की इस एक मिली हुई आवाज को पूँजीपतियों ने सुना, उपदेशकों ने सुना, धमप्रचारकों ने सुना, सिपाहियों और अफ़सरों ने सुना। आसमान को फाड़नेवाली लोगों की इस आवाज को सुनकर वे सव काँपने लगे और उनके घुटने डर से आपस में टकराने लगे। वे एक दूसरे से कहने लगे—"क्या हमलोगों का अन्तकाल आ पहुँचा?"

× × ×

अव लोग आन्दोलनकारियों के उपदेश के माफिक काम करने लगे और कुछ ही दिनों में उनके तमाम दुःख दूर हो गये। अव उस देश में न कोई प्यासा रहता था, न कोई भूखा मरता था, न किसी को नंगा फिरना पड़ता था, न जाड़े में तकलीफ़ उठानी पड़ती थी, और न किसी दूसरी

तरह की जरूरत सताती थी। हर एक आदमी दूसरे आदमी को अपने भाई की तरह समझता था और हर एक औरत दूसरी औरत को बहिन कहकर पुकारती थी। सबलोग एक घर के आदमियों की तरह रहते थे और फिर कभी उनको किसी तरह के दुःख का सामना नहीं करना पड़ा।

श्रमजीवियों को सन्देश

श्रमजीवी कौन हैं ?

श्रमजीवी कौन हैं ? हर एक आदमी जो अपने हाथ से, पैर से, दिमाग़ से मिहनत करके खाता है, श्रमजीवी है। फिर चाहे वह किसान हो, मजदूर हो, कारीगर हो, क्लर्क हो, स्कूलमास्टर हो, पोस्टमैन हो, रेल का बाबू हो या सरकारी नौकर हो। आप कहेंगे कि मिहनत करके तो सभी खाते हैं। बड़े-बड़े राजाओं को भी काम करना पड़ता है। बड़े-बड़े सेठ, साहूकार, धनवान, जमींदार, मालगुजार आदि भी कुछ-न-कुछ मिहनत करते ही हैं। उनको सदा अपना कारबार देखना पड़ता है। तब क्या वे भी श्रमजीवी हैं ? नहीं। मिहनत भी कई तरह की होती है। एक मिहनत अथवा श्रम वह है कि एक एक किसान खेत में जाकर दिन

भर हल जोतता है, बीज बाता है, पानी सींचता है। इस मिहनत के फल से अन्न पैदा होता है जिससे सबका पेट भरता है। एक मिहनत वह है कि एक लड़का फुटबाल खेलता है उसमें भी बड़ा परिश्रम करना पड़ता है और वह बिल्कुल थक जाता है। पर इस मिहनत से कोई नई चीज पैदा नहीं होती। एक मिहनत वह भी है जो चोर को चोरी करने में पड़ती है। उसे भी सेन्ध लगाने में एँड़ी-चोटी का पसीना एक कर देना पड़ता है। पर इस मिहनत से भी किसी का कुछ लाभ नहीं होता। इसलिये यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि मिहनत उसी का नाम है जिससे सब लोगों का कुछ फ़ायदा हो और कोई उपयोगी चीज़ पैदा हो या बने। भला सेठ-साहूकारों के ब्याज का हिसाब लगाने से कौन-सी नई चीज पैदा होती है? जमींदार अगर किसानों को मार-पीटकर पैसा वसूल करता तो उससे किसी को क्या मिलता है? कुछ भी नहीं। ये लोग दूसरों की मिहनत की कमाई छीनने में मिहनत करते हैं। इसलिये ये श्रमजीवी नहीं कहे जा सकते।

श्रमजीवियों के अधिकार और वर्तमान दशा

इससे मालूम हुआ कि संसार में सब चीजों पर वास्तव में श्रमजीवियों का अधिकार होना चाहिये। क्योंकि सब

चीज़ें उनकी मिहनत से ही पैदा होती हैं या बनती हैं। पर क्या आजकल ऐसा होता है? नहीं, बिल्कुल उलटा हाल देखने में आ रहा है। किसान गेहूँ, चावल आदि जो उत्तम अनाज पैदा करते हैं उनको वह अनाज खाने को नहीं मिलता है। उसे खाते हैं कुछ भी काम न करनेवाले मालदार आदमी। और किसान को मोटे अनाज से, जंगल के फल-पत्तों से, साग पात से अपना पेट भरना पड़ता है। फिर देखिये कारीगर, मजदूर लोग बड़े-बड़े मकान व महल बनाते हैं। पर बन जाने के बाद वे उनके भीतर घुस भी नहीं सकते। उनको सदा गन्दी और अँधेरी कोठरियों या घास-फूस की झोंपड़ियों में रहना पड़ता है। कारखानों में मजदूर लोग बढ़िया-बढ़िया कपड़े बनाते हैं, पर उनको सदा चिथड़े लपेटकर ही दिन बिताने पड़ते हैं। उन कपड़ों को ऐसे लोग पहिनते हैं जिनके पास बहुत सा सोना-चाँदी होती है।

ऐसा क्यों होता है?

ऐसा क्यों होता है? इस बात के समझ सकनेवाले बहुत थोड़े हैं। अधिकांश लोग इस बात को तकदीर अथवा भाग्य का लेख मानकर सन्तोष धारण कर लेते हैं। कोई समझते हैं कि यह ईश्वर की करनी है, इसमें किसी का

वश नहीं पर वास्तव में बात ऐसी नहीं है। यह ईश्वर और भाग्य की बात इन मालदार और दूसरे की मिहनत पर बैठे-बैठे खानेवाले लोगों ने ही फैलाई है। इसके कारण गरीब लोग मन मारकर कष्ट सहते हैं और लूटनेवालों के विरुद्ध सिर नहीं उठाते। तब इन बातों का असली कारण क्या है? असली कारण आजकल का राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक संगठन है। आजकल राज्य का कारबार मालदार लोगों के हाथ में रहता है। इसलिये वे ऐसे-ऐसे क़ानून बना लेते हैं कि जिससे गरीब लोग उनके नीचे दबकर काम करते हैं। आजकल रुपये के मामले में बड़ी चालाकी के काम होने लग गये हैं। बम्बई, कलकत्ता में फाटका करनेवाले लोग रात-दिन लाखों मन चीजों के खरीदने-बेचने का सौदा करते हैं, यद्यपि उनके पास एक छटाँक भी चीज नहीं होती। वे केवल बाजार-भाव के माफ़िक फायदा-नुकसान का लेन-देन करते हैं। इसलिये गरीब लोगों की मिहनत से पैदा हुई चीजें जो अमीरों और मालदार के पास पहुँच जाती हैं उसका कारण सिवाय ऐसी ही चालबाजी अथवा ठगी के और कुछ नहीं है।

जमींदार और किसान

उदाहरण के लिये जमींदारों को लीजिये। एक-एक

जमींदार के पास दो चार या दस बीस गाँव होते हैं, वह इन गाँवों के बदले में सरकार को जितना रुपया हर साल देता है, उससे चौगुना अठगुना किसानों से वसूल कर लेता है। वह न तो खेतों को जोतता-बोता है, न इस काम में किसी प्रकार की सहायता करता है। अच्छा तो फिर बतलाइये कि वह इतना रुपया किसानों से मुफ्त में क्यों वसूल करता है ? आप कहेंगे कि उसको जमीन है, वह किसानों से अपनी जमीन का भाड़ा-कर लेता है। पर हमारा कहना है कि क्या वह जमींदार जमीन को अपने साथ लाया था, या अपने साथ ले जायगा ? फिर जमीन उसकी कैसे हुई ? हिन्दू-शास्त्रों में तो स्पष्ट लिखा है कि जमीन उसीकी है जो उसे जोतता-बोता है। इसलिये सच्ची बात यह है कि जमीन न तो जमींदार की है, न उसके बाप की। केवल अपनी ताकत के जोर से किसी समय उसके बाप-दादों ने उस जमीन पर कबजा कर लिया, या किसी राजा, बादशाह ने खुश होकर जमीन उसे इनाम दे दी। यद्यपि अब तक लोग समझते हैं कि राजा, बादशाह को इस प्रकार जमीन इनाम देने का हक है और जमींदार को किसानों से जितना चाहे उतना लगान लेने का हक़ है, पर दरअसल यह बात बिल्कुल गलत है। राजा, बादशाह तो केवल इस मतलब से कि ये जमींदार बननेवाले लोग प्रजा को दबाये रहें और हमारी

सहायता करते रहें, लोगों को जमीन आदि दे देते हैं। पर हम जोर के साथ कह सकते हैं कि ज़मीन ऐसी चीज़ है कि कोई किसी को नहीं दे सकता। ज़मीन जमींदार को तो क्या ख़ुद राजा को भी नहीं, वह तो केवल उस किसान को ही समझी जानो चाहिये जो उसे जोतता है—हाँ, राजा को या, इन्तजाम करनेवाली पञ्चायत या कौंसिल को पैदा-वार का थोड़ा सा हिस्सा दिया जा सकता है; क्योंकि उनको इन्तजाम के लिये थोड़े बहुत धन की जरूरत पड़ती है। पर शासन-सभा को दिया गया रुपया कहीं जाता नहीं, वह स्कूल, अस्पताल, सड़क आदि के रूप में हमारे लिये ही ख़र्च कर दिया जाता है। पर ये जमींदार हमारे लिये क्या करते हैं? ये तो हमसे रुपया लेकर केवल खुद खाते-पीते और मौज उड़ाते हैं। इस प्रकार यह साफ़ मालूम होता है कि जमींदार को किसान से एक पाई लेने का भी हक नहीं है और उसे कुछ भी न मिलना चाहिये।

कारखानेवाले और मजदूर

जो बात जमींदार और किसानों की है वही कारखानों के मालिक और मज़दूरों के लिये भी कही जा सकती है। पहले जमाने में हर एक आदमी अपने घर या दुकान पर बैठकर दस्तकारी, कारीगरी का काम करता रहता था।

उसको किसी की नौकरी नहीं करनी पड़ती थी, और वह अपने काम में स्वतंत्र रहता था। पर अब नये-नये आवि-ष्कारों के कारण दशा बिल्कुल बदल गई है। अब स्वतन्त्र कारीगर अपने घर का काम छोड़कर मजदूर बन गये हैं। एक-एक कारखाने में हजारों, लाखों मजदूर काम करते हैं। अगर कारखाने का मालिक कभी एकदम अपना काम बन्द कर देता है तो हजारों आदमी भूखों मरने लगते हैं।

इतना ही नहीं कि कारखानों के कारण लाखों आदमी पराधीन बन गये हैं, वरन् उनकी आर्थिक और सामाजिक दशा भी बहुत खराब हो गई है। कारखानों में काम करने-वाले मजदूरों को प्रायः उतनी ही मजदूरी दी जाती है जिससे वे किसी प्रकार अपना और अपने बाल-बच्चों का पेट भर सकें। पर पेट भरने के सिवाय उनके पास मनुष्यों के समान आराम और दिल खुश करने के कोई साधन नहीं होते। उनको अपना जीवन गरीबी और दुःख में बिताना पड़ता है। एक तरफ़ मजदूरों की ऐसी दुर्दशा होती है और दूसरी तरफ़ कारखाने के मालिक का धन दिन पर दिन बढ़ता जाता है। वे मौज-शौक में लाखों रुपया उड़ा देते हैं। भाइयो, क्या यह आश्चर्य और खेद का दृश्य नहीं है? एक आदमी तो दस बारह घंटे कमरों में बंद रहकर सख्त काम करता है और उसे जीवन-निर्वाह के लिये

काफ़ी खर्च भी नहीं मिलता। और दूसरा आदमी जो उसी जगह शानदार आराम-कुरसी पर पड़ा रहता है लाखों रुपये पा जाता है। आखिर इस भेद का सबब क्या है?

इसका सबब बहुत छिपा हुआ नहीं है। कारखाने में मजदूर जब चार रुपये का काम कर देता है तो उसको एक रुपया मजदूरी दी जाती है, बाकी तीन रुपये कारखानेवाले की जेब में जाते हैं। आप शायद फिर कहने लगेंगे कि ये तीन रुपये तो उसकी मशीनों और कारखाने के बदले में हैं। उसने जो दस, बीस लाख रुपया लगाकर कारखाना खोला है आखिर उसको उससे कुछ फायदा भी तो होना चाहिये। ठीक है, पर हम पूछते हैं कि उसके पास कारखाने खोलने को रुपया कहाँ से आया? क्या हम सदा नहीं देखते कि एक दुकानदार या कोई और व्यापारी आकर छोटी सी दुकान खोलता है और उसको बढ़ाते-बढ़ाते कोठी बना डालता है। फिर वही व्यापारी एक छोटा सा कारखाना खोलता है और उसे बढ़ाते-बढ़ाते बड़ी भारी मिल बना देता है। अब बतलाइये कि उसके पास यह सब रुपया कहाँ से आता है? क्या वह रुपये की खेती करता है या जमीन खोदकर धन निकालता है? नहीं, यह रुपया उन्हीं गरीब मजदूरों की मजदूरी में से बचाया जाता है। ऐसी दशा में यदि यह कहा जाय कि मजदूर ही कार-

खाने के असली मालिक हैं तो इसमें क्या झूठ है? फिर एक बात ध्यान देने की और है। क्या कारखाने, मशीनें और इञ्जिन अपने आप काम कर सकते हैं, कपड़े और चीजें तैयार कर सकते हैं? कभी नहीं। जब तक आदमी उनसे काम न लेगा तब तक वे बेकार हैं, खाली लोहे के टुकड़े हैं। सच्ची बात यह है कि रुपया आदमी की मिहनत से पैदा होता है न कि मशीन और इञ्जिनों से। इसलिये जो कारखानेवाले अथवा मिलों के मालिक बैठे-बैठे लाखों रुपया पाते रहते हैं, उसको सिवाय लूटने या ठगने के और कुछ नहीं कहा जा सकता।

अन्याय के कुछ और नमूने

आजकल संसार में चारों ओर यही हाल दिखलाई पड़ता है कि मालदार लोग गरीबों को लूटते हैं। या इस तरह कहना चाहिये कि कुछ चालाक और शक्ति-सम्पन्न आदमी कमजोर, निर्बलों और मूर्खों को ठगते और लूटते हैं। पर इस लूटने और चोर-डाकुओं के लूटने में थोड़ा सा भेद है। चोर-डाकू किसी का धन खुल्लमखुल्ला मार-पीटकर छीनते हैं। पर ये मालदार लोग—सफ़ेदपोश, सभ्य डाकू, चालबाजी से एक रुपए की चीज के चार रुपये लेकर और एक रुपये के काम के चार आने देकर,

दूसरे का धन लूटते हैं। आजकल की भाषा में इसको Exploitation (एक्सप्लॉयटेशन) अर्थात् कोई कारबार जारी करके उससे फ़ायदा उठाना, कहते हैं। पर असल बात यह है कि आजकल राज्य धनवानों का ही है। परिश्रम, ताक़त और विद्या आदि सब बातें धन के आगे हाथ जोड़े खड़ी रहती हैं। राममूर्ति सरीखा ताक़तवर आदमी जो हाथी को भी अपनी छाती पर चढ़ा लेता है धनवान की खुशामद अवश्य करेगा, जिससे उसे दो चार सौ रुपये ज्यादा मिल जायँ। मालवीय जी जैसे देशपूज्य भी जाकर मारवाड़ी सेठों की प्रशंसा में दो चार बात कह देंगे, जिससे उन्हें अपने विद्यालय के लिये दस पाँच लाख रुपये मिल जायँ। और तो क्या महात्मा गांधी जैसे संसार के सर्वश्रेष्ठ पुरुष भी तिलक-स्वराज्य-फण्ड के लिये एक करोड़ रुपया इकट्ठा करने के काम में बम्बई के मालदार लोगों के सामने झुक जाते हैं। सो यह जमाना ही ऐसा है कि इस समय केवल धन की ही पूजा और इज्जत होती है। यही कारण है कि धनवानों के लूटने को कोई बुरा नहीं कहता और उनकी रक्षा के लिये बड़े-बड़े क़ायदे कानून बनाये जाते हैं, बड़े-बड़े अच्छे शब्द ढूँढ़-ढूँढ़ कर उन लोगों के ऐब—अथवा दोष को छिपाया जाता है। पर ये सब बातें धनवानों की असली भयंकरता को नहीं छिपा सकतीं। हम

पूछते हैं कि यदि चार रुपये की कीमत के मुलम्मे के गहने को असली सोने का बतलाकर बीस रु० में बेचनेवाला सजा पाने का हकदार है तो एक रुपये में तैयार किये गये धोती-जोड़े को चार रुपये में बेचनेवाले मिल-मालिक को सजा क्यों न मिलनी चाहिये ? अथवा यदि किसी के घर में से चोरी करनेवाला व्यक्ति जेलखाने भेजा जाता है, तो दस सेर का अनाज खरीद कर उसे पाँच सेर के भाव से बेचनेवाले दुकानदार पर मुकद्दमा क्यों न चलाया जाय ? यद्यपि ये बातें हजारों वर्षों से होती चली आती हैं और इसलिये ये हमारे स्वभाव में इतनी मिल गई हैं कि हम सहज में उनकी बुराई नहीं समझ सकते, तो भी यदि विचार करके देखा जाय तो एक डाकू, एक चोर और एक कारखाने के मालिक या दुकानदार में कोई विशेष अन्तर नहीं है। भेद केवल लूटने के ढंग का है। हम जानते हैं कि आजकल के समय में बहुत कम लोग हमारी बातों की सचाई को मानेंगे, पर हम अच्छी तरह से साबित कर सकते हैं कि इन बातों में ज़रा भी ग़लती नहीं। इसके लिये एक सच्चा दृष्टान्त सुनिये।

सिकन्दर और डाकू का किस्सा

सिकन्दर के ज़माने में एक डाकू बड़ा जबर्दस्त था।

उसने सिकन्दर के तमाम राज्य में बड़ी लूटमार मचा रखी थी। अन्त में बड़ी कठिनता से वह पकड़ा गया और सरकारी कर्मचारी उसे सिकन्दर बादशाह के सामने लाये। उस समय उन दोनों में इस प्रकार बातचीत हुई।

सिकन्दर—डाकू, तूने मेरे राज्य में बड़ी लूटमार मचा रक्खी थी। मेरी प्रजा को तेरे कारण बड़ा कष्ट हुआ। अब कह तुझे क्या सजा दी जाय ?

डाकू—मैंने सजा पाने का कोई काम नहीं किया। वैसे इस समय मैं तुम्हारे कब्जे में हूँ, इससे जो चाहे सो करो।

सिकन्दर—तूने कुछ नहीं किया! तूने हजारों आदमियों का धन, माल लूट लिया; सैकड़ों को जान से मार डाला; बीसियों गाँवों को जला दिया; और फिर भी तू कहता है कि मैंने कुछ नहीं किया ?

डाकू—पर यदि मैंने कुछ आदमियों को लूटा है तो तुमने बड़े-बड़े देशों को लूटा है। यदि मैंने थोड़े से आदमियों को मारा है तो तुमने जगह-जगह युद्ध करके लाखों मनुष्यों की हत्या कराई है। यदि मैंने दस बीस गाँव जलाये हैं तो तुमने अनेकों बड़े-बड़े सुन्दर शहरों को मिट्टी में मिला दिया है। ऐसी दशा में ज्यादा कसूरवार तुम हो या मैं ?

सिकन्दर—मैंने जो कुछ किया है, वह राजा के धर्म के

अनुसार किया है। यदि मैंने लोगों को लूटा है तो लाखों रुपया इनाम भी दिया है। यदि मैंने शहरों को जलाया है तो नये शहर बसाये भी हैं। पर तूने तो डाका डालने के सिवाय कुछ भी नहीं किया।

डाकू—तुम्हारे हाथ में ताक़त है; इसलिये अपने कामों का चाहे जैसा मतलब निकाल लो। नहीं तो वास्तव में जो काम मैंने सौ पचास आदमियों को साथ लेकर किया है वह तुमने लाख पचास हजार आदमियों को साथ लेकर किया है। यों तो मैं भी जो धन अमीरों से लूटता हूँ वह गरीबों को बाँट देता हूँ। मैं सदा अपने साथियों की रक्षा के लिये प्राण देने को तैयार रहता हूँ। मुझमें और तुममें अन्तर इतना ही है कि तुम बड़े डाकू हो।

सिकन्दर ने डाकू की बात मान ली।

यही दशा आजकल धनवानों की है। वे भी ग़रीबों को लूटते और ठगते हैं, पर तरकीब के साथ। क्या ग़रीब लोगों से २ पैसा और ४ पैसा फी रुपया ब्याज लेना लुटेरापन नहीं है जो चीज़ बाज़ार में ४ सेर की बिकती है उस चीज़ को सीधे-सीधे गाँववाले से ६ सेर की खरीदना क्या चोरी करने से कम है? क्या रुपये का काम करके आठ आना मजदूरी देना बेईमानी नहीं है? इन्हीं सब चालाकियों और ठग-विद्याओं के कारण कुछ लोग खूब मालदार हो जाते हैं,

लखपती और करोड़पती बन जाते हैं और बाकी तमाम आदमी भूखों मरते हैं और जरूरी चीजों के लिये भी तरसते रहते हैं। आजकल के व्यापार और व्यवसाय के ढंग का ही यह फल है कि मालदार लोग दिन पर दिन ज्यादा मालदार बनते जाते हैं, उनका खजाना दिन पर दिन बढ़ता जाता है और ग़रीबों का बचा-खुचा थोड़ा सा पैसा भी कम होता चला जाता है।

दूसरे देशों की दशा

ग़रीबों की यह दशा खाली किसी एक ही देश में नहीं है, वरन् सारे संसार की यही गति है। सब देशों में और सब स्थानों में ग़रीब लोग मालदार लोगों की तृष्णा और लालच के शिकार बन रहे हैं। पर यूरोप और अमरीका के ग़रीब लोग (श्रमजीवी) अब अपनी दशा को और मालदारों के अन्याय को समझ गये हैं। उनको मालूम हो गया है कि हमारी कमाई को लूटकर ही ये थोड़े से लोग असंख्य धन के स्वामी बन बैठे हैं। उनको इस बात का पता लग गया है कि यदि हम लोग काम न करें तो इन मालदार लोगों को एक दिन भी भोजन मिलना मुशकिल हो जाय। क्योंकि ये लोग तो हाथ पर हाथ रखे आराम से समय गुज़ारते रहते हैं। जो कुछ काम होता है और जो

कुछ चीज़ें बनाई जाती हैं उस सबके करनेवाले और बनाने वाले तो श्रमजीवी अथवा ग़रीब मज़दूर ही हैं। इसलिये अब उन देशों के मज़दूर अपनी ताक़त को समझ गये हैं।

इस दशा से कैसे छूटा जाय ?

पर इस दशा में से कैसे छूटा जाय ? हम समझते तो बहुत सी बातें हैं, पर सबको कर नहीं सकते। यद्यपि ग़रीब लोग अपने ऊपर होनेवाले अन्यायों को जान गये हैं, पर केवल उनके जान लेने से मालदार आदमी अपना काम बन्द नहीं कर सकते। यदि धनवानों को ऐसा न करने के लिये समझाया जाय और धर्म तथा नीति का भय दिखाया जाय तो उससे भी कुछ लाभ नहीं। क्योंकि धन ऐसी चीज़ है कि उसके लिये आदमी प्रायः भले और बुरे का विचार छोड़ देता है। इसलिये इस दशा से छूटने का एकमात्र उपाय यही है कि ग़रीब लोग (श्रमजीवी) आपस में मिलकर, एक होकर मालदार लोगों के अन्याय का विरोध करें। यूरोप व अमरीका में श्रमजीवियों ने यह उपाय काम में लाना शुरू कर दिया है। इसी को सोशलिज़्म (साम्यवाद), कम्यूनिज़्म, बोलशेविज़्म आदि अनेक नामों से पुकारा जाता है। रूस के श्रमजीवियों को अपने उद्देश्य में सफलता भी प्राप्त हुई है। उन्होंने अपने यहाँ से मालदार

लोगों की हुकूमत को उखाड़कर फेंक दिया है। अब वहाँ ऐसी हालत नहीं है अमीरों के सामने तो बढ़िया-बढ़िया भोजनों की बीसियों थाली रखी जायँ, उनके कुत्ते बिल्ली भी दूध-मलाई खायँ और ग़रीब लोग रोटी के टुकड़े को भी तरसें। अब वहाँ ज्यादातर लोगों को जीवन-निर्वाह के आवश्यक पदार्थ प्रायः एक से और अपनी आवश्यकतानुसार मिलते हैं।

भारत के श्रमजीवियों का कर्त्तव्य

इस समय भारत के श्रमजीवियों का क्या कर्त्तव्य है? हमें खेद के साथ कहना पड़ता है कि अभी उनको अपनी दुर्दशा का भी पूरा ज्ञान नहीं है। वे दुःख अवश्य सहते हैं; पर उसका कारण उनको ज्ञात नहीं। इसलिये उनका कर्त्तव्य यही है कि वे अपने ऊपर होनेवाले मालदार और ज़मींदार लोगों के अन्यायों को समझें और उनसे बचने के लिए अपना सङ्गठन करें।

कुछ सवालों के जवाब

सवाल—आप यह कैसे कह सकते हैं कि कम्यूनिज्म या बोलशेविज्म अर्थात् साम्यवाद के द्वारा संसार से अन्याय मिट जायगा और शान्ति हो जायगी ?

जवाब—अभी तक दुनिया के आदमी ऐसे दो दलों में बँट रहे हैं जिनमें से एक दल मिहनत करता है और दूसरा बैठे-बैठे मौज उड़ाता है। बैठे-बैठे खानेवालों का दल सदा दूसरे दल को दबाकर रखने की कोशिश करता है, और इसीसे तरह-तरह के झगड़े और बुराइयाँ पैदा होती हैं। इस समय एक दल धनवानों या मालिकों का है और दूसरा ग़रीबों या मज़दूरों का। ये दोनों दल आपस में लड़ते रहते हैं। बोलशेविक चाहते हैं कि दुनियाँ में एक ही दल रह जाय। पर सब लोग मालिक बन नहीं सकते, क्योंकि बिना नौकरों के मालिकी कैसे हो सकती है ? इसलिये दुनियाँ में एक दल मिहनत पेशावालों का ही रह सकता है। मिहनत पेशावालों में से फिर कोई दूसरा दल पैदा नहीं हो सकता। इस तरह सब लोग एक हो जायँगे और मिहनत करके खायँगे।

सवाल—आप तो कहते हैं कि कम्यूनिज्म में सब बराबर माने जाँयगे, ख़ुदमुख़्तार रहेंगे और किसी पर दबाव नहीं डाला जायगा। तब वे लोग धनवानों को क्यों दबायेंगे और उनको एक नागरिक के हक़ क्यों नहीं देंगे?

जवाब—कम्यूनिस्ट या साम्यवादी धनवानों को उसी समय तक दबाये रखने के पक्ष में हैं जब तक वे अपने हाथ से काम न करने लग जायँ। दुनिया में किसी को बैठे-बैठे खाने या हरामखोरी करने का हक़ नहीं है। इसके सिवाय हमारा उद्देश्य दुनियाँ में सिर्फ़ एक दल रखना है। क्योंकि जब तक दो दल रहेंगे तब तक संसार में शान्ति हो नहीं सकती। इसलिये तमाम संसार के भले के लिये एक मुट्ठी भर धनवानों को दबाना, सो भी ऐसा दबाना जिससे दरअसल उनका भी कल्याण होता है, वे बजाय काहिल और बेकार बने रहने के उद्योगी और परिश्रमी बन जाते हैं—कोई बुरी बात नहीं है।

सवाल—अगर तमाम सम्पत्ति पर आम लोगों का कब्ज़ा मान लिया जाय और हरएक आदमी को जितनी चीज़ वह चाहे लेने की इजाजत दे दी जाय तो ज्यादातर लोग काम काज करना छोड़ देंगे और बैठे-बैठे खूब खायँगे?

जवाब—आजकल आदमियों की जैसी आदत पड़ गई है, उससे यह शङ्का बहुत कुछ सच है। इसलिये शुरू में हर

एक आदमी को काम करने पर ही खाने को मिलेगा और बिना सबब बेकार रहनेवाले लोगों से जबर्दस्ती काम कराया जायगा।

सवाल—अच्छा, दूसरी बात यह है कि अगर सब लोगों को एक सा खाने पहिनने को दिया जायगा, तो लोग काम करने में ज्यादा मिहनत क्यों करेंगे, और क्यों बढ़िया काम करने की कोशिश करेंगे? फिर तो सब लोग जैसे तैसे बेगार टालने लग जायँगे?

जवाब—हाँ, यह दोष भी आजकल के आदमियों के स्वभाव में घुस गया है। इसलिये यह सोचा गया है कि शुरू में लोगों को उनके काम के मुताबिक चीजें दी जायँ। इस पर शायद आप कहने लगेंगे कि फिर इसमें और आजकल की हालत में फ़र्क ही क्या हुआ? इसका जवाब यह है कि आजकल के नौकरों की तनखाह में इतना ज्यादा फ़र्क रहता है कि एक तो भूखा मरता है और उसे रूखी रोटी भी भरपेट नहीं मिलती और दूसरा अपने कुत्ते को दूध मलाई खिलाता है। पर कम्यूनिज्म (साम्यवाद) में इतना फ़र्क कभी नहीं हो सकता। उस समय हर एक आदमी को इतना जरूर मिलेगा जिससे वह अच्छी तरह खा-पी सके। अधिक काम करनेवाला जरा ज्यादा आराम से रहेगा और थोड़ा काम करनेवाला कुछ कम आराम से।

सवाल—पर तो भी जब कम्यूनिष्ट व्यक्तिगत (निजी) सम्पत्ति को बिलकुल नहीं मानते और कोई आदमी किसी चीज़ को अपना न समझ सकेगा तो लोग आलसी ज़रूर बन जायँगे। फिर आजकल की तरह अपनी पूरी ताक़त लियाक़त ख़र्च करके काम न करेंगे ?

जवाब—अब से कुछ लाख वर्ष पहिले एक ज़माना था जब कि हरएक आदमी सिर्फ़ अपना भला और आराम चाहता था। उस समय आदमी का सबसे बड़ा काम पेट भरना था, और जिस तरह एक जानवर दूसरे को खाता है उसी प्रकार आदमी एक दूसरे को मारकर भी अपना पेट भरना बुरा नहीं समझता था। तब से तरक्की होते-होते अब ऐसा ज़माना आ गया है कि आदमी के स्वभाव में बहुत कुछ सुधार हो गया है और वह अपने साथ दूसरे का भी भला सोचता है। अब ऐसे भी आदमी बहुत मिलेंगे जो दूसरे के भले के लिए तरह-तरह की तकलीफें उठाते हैं और प्राण तक दे देते हैं। इस तरक्की को देखकर यह अनुमान किया जा सकता है कि एक ज़माना ऐसा भी आवेगा जब कि मनुष्य यह विचार न करके कि मैं कितना खाता हूँ या ख़र्च करता हूँ अपनी ताक़त के मुताबिक पूरा काम करता रहेगा। जिस प्रकार आजकल एक कुटुम्ब के कई आदमी मिलकर रहते हैं, कोई कम कमाता है कोई ज्यादा, पर

खाने के समय यह नहीं सोचा जाता कि ज्यादा कमाने वाले को अधिक खाने को दिया जाय और कम कमानेवाले को थोड़ा। इसी प्रकार सम्भव है कि आनेवाले जमाने में हर एक आदमी दूसरे तमाम लोगों को अपने कुटुम्बी या भाई-बन्धु की तरह समझेगा और उनके लिये अपनी ताक़त के मुताबिक ज्यादा-से-ज्यादा काम करेगा। इसी विश्वास के आधार पर कम्यूनिज्म में व्यक्तिगत सम्पत्ति को न मानकर यह निश्चय किया गया है कि तमाम पैदावार पर आम लोगों का अधिकार हो और जिस आदमी को जितनी जरूरत हो उसको उतना सामान दिया जाय। पर जब तक मनुष्य इतने ऊँचे पर नहीं चढ़ते कि वे सबको अपने कुटुम्बी की तरह समझ सकें, तब तक निजी जायदाद का नियम पूरी तरह से नहीं हटाया जायगा। तब तक सिर्फ़ इतना ही किया जायगा कि जमीन कारखाने आदि बड़ी-बड़ी चीजों पर समाज का कब्जा रहेगा; जिससे एक आदमी बहुत-सा रुपया इकट्ठा न कर सके और दूसरे लोगों को ग़रीब बना कर अपना गुलाम न बना सके। (हमारे बहुत से हिन्दुस्तानी भाई इस बात को सच न मानेंगे कि आजकल के जमाने में मनुष्यों में स्वार्थ की मात्रा पहले से कम होती जाती है। पर इसका कारण यह है कि उनको दो चार हजार वर्ष से पहिले के इतिहास का ज्ञान नहीं है। इधर

कुछ समय से हिन्दुस्तान में उलटा चक्कर चल रहा है, और यहाँ के निवासी पहले की अपेक्षा नीचे गिरते जाते हैं। पर हम जो बातें लिख रहे हैं वे इससे बहुत पुरानी हैं।)

सवाल—क्या आपकी सम्मति में हिन्दुस्तान में बोलशेविज्म की सब बातों को चलाना अच्छा है? वे लोग तो धर्म कर्म कुछ नहीं मानते। इसके सिवाय हम लोगों से उनकी मौजूदा हालत, रीत-रिवाजों, और रहन-सहन में भी बहुत फर्क है?

जवाब—नहीं, हिन्दुस्तान में बोलशेविज्म की तमाम बातों को चलाने की जरूरत नहीं है। कम्यूनिज्म के माननेवाले पुराने ख्याल के लोगों की तरह अंधविश्वासी या लकीर के फकीर नहीं होते। कम्यूनिज्म या साम्यवाद का मुख्य उद्देश्य तो गरीबों पर होनेवाले अन्यायों को दूर करना और सब लोगों को उनके असली हक़ दिलाना है। इस उद्देश्य को पूरा करने की कोशिश वे लोग जरूर करेंगे, पर जिस देश की हालत जैसी होगी उसके मुताबिक रास्ते से ही काम किया जायगा।